महान विजय

वासिली र्याबोव

महान विजय

सोवियत जनता के महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध (1941-1945) का संक्षिप्त वृत्तांत

वासिली र्याबोव

सोवियत भूमि पुस्तिका
1985

THE GREAT VICTORY
(Hindi)

अप्रैल, 1985

मुद्रक : ग्राज प्रिंटर्स शाहदरा, दिल्ली-110032

विषयानुक्रम

युद्ध से ठीक पहले

"सारे के सारे युद्धों को उन राजनीतिक व्यवस्थाओं से, जो उन्हें जन्म देती हैं, अलग नहीं किया जा सकता।"

—व्लादीमिर लेनिन

मानव जाति ने पिछले 5,500 वर्षों में छोटी-बड़ी कुल 14,000 से अधिक लड़ाइयां लड़ी हैं। इस शताब्दी के पूर्वार्ध में दो विश्वयुद्ध हुए थे जो इतने बड़े पैमाने पर लड़े गये थे और इतने विनाशकारी रहे कि उनसे और किसी युद्ध की तुलना ही नहीं हो सकती।

1914-18 के प्रथम विश्व युद्ध में 36 राज्यों ने भाग लिया था जिनकी कुल आबादी 100 करोड़ से ज्यादा थी। इसमें सात करोड़ लोग शस्त्रसज्जित थे। द्वितीय विश्वयुद्ध (1939-45) में भाग लेने वाले देशों की संख्या 61 थी जिनकी कुल आबादी 170 करोड़ थी। इनमें से 11 करोड़ लोग सशस्त्र सेनाओं में सेवारत थे। प्रथम विश्वयुद्ध में तीन करोड़ लोग मारे गये या अपंग हुए थे, जबकि द्वितीय विश्वयुद्ध में मात्र मारे जाने वालों की संख्या पांच करोड़ से अधिक थी।

जर्मनी और उसके मित्रराष्ट्रों की पराजय के बाद नवंबर 1918 में, जिस समय विजयी शक्तियों की ओर से फ्रांस के फर्दिनांद फोश ने कांपिएन के जंगल में अपने रेल के डिब्बे में जर्मन प्रतिनिधियों को विरामसंधि की शर्तें लिखवायी थीं, 'इतिहास में पिछला युद्ध' विषय पर कितने ही बढ़िया-बढ़िया भाषण दिये गये थे।

जब जून 1940 में यूरोप पुन: एक नये युद्ध की अग्निज्वालाओं में घिर गया और फ्रांस को हिटलरी हमलावरों ने अपने पांवों तले कुचल डाला, तब उसी जंगल में उसी रेल के डिब्बे में जेनरल विल्हेल्म केटल ने फ्रांस के प्रतिनिधियों को विरामसंधि की जर्मन शर्तें लिखवायी थीं।

उस दिन केटल को यह कदापि नहीं सूझा होगा कि उससे पांच साल बाद वेरमाख्ट के परास्त हो जाने पर उसे नाज़ी जर्मनी के बिना शर्त आत्मसमर्पण की

दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करने पड़ेंगे। यह घटना बर्लिन से थोड़ी ही दूर कार्ल्सहोर्स्ट में 8 मई 1945 को घटी थी।

इस तीन शासकीय समारोहों के बीच की अनेक वर्षों की अवधि में नाटकीय मुठभेड़ों से भरपूर राजनीतिक, वैचारिक और सशस्त्र संघर्ष चलता रहा था।

जैसे नदियों में छोटे-छोटे स्रोतों और बड़ी-बड़ी सहायक नदियों से पानी भरता है, वैसे ही संसार की महनीय घटनाओं के भी तात्कालिक और गहन, दोनों ही प्रकार के हेतु होते हैं। द्वितीय विश्वयुद्ध के साथ भी यह बात पूरी तरह लागू होती है। पुरानी पीढ़ी के लोगों को चौथे दशक की ऐसी अनेक त्रासद घटनाएं याद हैं जो विश्वयव्यापी प्रलयाग्नि का पूर्वरंग सिद्ध हुईं।

अच्छा, तो द्वितीय विश्वयुद्ध शुरू कैसे हुआ, किसने उसका सूत्रपात किया और किसने उसे शुरू होने दिया?

द्वितीय विश्वयुद्ध एकाएक नहीं फूट पड़ा; वह प्रथम विश्वयुद्ध के बाद के बीस वर्षों में पकता आया था। इन वर्षों के दौरान पूंजीवाद के सारे के सारे अंत-र्विरोध गहरे होते गये थे तथा पूंजीवादी राज्यों के अर्थतंत्र और नीतियों में राज्य-इजारेदार पूंजी की भूमिका बढ़ती गयी थी। जैसे-जैसे सैन्यवाद अपनी प्रतिष्ठापना करता गया, हथियारों की होड़ में तेजी आती गयी। जर्मनी, इटली और जापान जैसे अनेक देशों के शासक वर्गों ने अपनी सत्ता को सुदृढ़ बनाने के फसिस्ट तरीकों का सहारा लेना शुरू कर दिया।

तीसरे दशक के उत्तरार्ध और चौथे दशक के पूर्वार्ध में जो विश्वव्यापी आर्थिक संकट पैदा हुआ, उसके दबाव में प्रभाव-क्षेत्रों के सवाल को लेकर साम्राज्यवाद के भीतर के पुराने आपसी अंतर्विरोध उग्र रूप लेते गये। प्रथम विश्व-युद्ध का पटाक्षेप करने वाली वर्साई संधि के दोषों ने भी अपनी भूमिका निभायी। पराभूत देश शक्ति-संचय कर रहे थे और प्रतिशोध के लिए व्यग्र हो रहे थे। दो विरोधी सैनिक गुट उभरते आ रहे थे, एक में जर्मनी, इटली और जापान शामिल थे और दूसरे में ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीका।

प्रथम विश्वयुद्ध की ही तरह द्वितीय विश्व युद्ध भी पूंजीवादी जगत के भीतर ही छिड़ा, किंतु दोनों विश्व युद्धों का चरित्र बिलकुल एक-सा नहीं था। 1917 की रूस की समाजवादी क्रांति के बाद संसार पूंजीवाद और समाजवाद की दो विरोधी व्यवस्थाओं में बंट गया था और राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन का आविर्भाव हो चुका था और द्वितीय विश्वयुद्ध के चरित्र, दिशा और परिणाम पर इन दोनों बातों की स्पष्ट छाप पड़ी।

साम्राज्यवादी गुट आपस में लड़ अवश्य रहे थे, लेकिन वे सोवियत संघ की कीमत पर अपनी समस्याओं को हल करने के विरुद्ध नहीं थे। सोवियत-विरोध की नीति फासिस्ट राज्यों ने अपनायी थी और विश्व साम्राज्यवाद उसका इस्ते-

माल सोवियत संघ को कुचलने के लिए अपने अस्त्र के रूप में करना चाहता था। ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीका के शासक हलक़ों ने जर्मनी, इटली और जापान को हर संभव सहायता पहुंचायी तथा आक्रांताओं पर अंकुश लगाने और शांति सुनिश्चित करने के लिए एक संयुक्त मोर्चे का निर्माण करने के सोवियत संघ के प्रस्तावों का घनघोर विरोध किया।

ऐसी स्थिति से हिटलरी जर्मनी और उसके लुटेरे मित्रराष्ट्र इटली और जापान और भी अधिक वेधड़क हो गये और अंततः उन्होंने एक नया विश्वयुद्ध छेड़ ही दिया। चौथे दशक के मध्य में उन्हीं की वजह से युद्ध के दो सरगर्म ठिकाने—एक पश्चिम में और दूसरा पूर्व में—पैदा हो गये। इसके लिए अन्य देशों के साम्राज्यवादी ही नहीं, समग्र रूप में वह पूंजीवादी व्यवस्था भी, जिम्मेदार थी, जो भीषण भूमंडलीय संघर्षों, सामाजिक और राजनीतिक उथल-पुथलों और देशविजय के युद्धों को जन्म देती है।

क्या उस समय संभव था कि शांति की रक्षा कर ली जाती और एक नये विश्व-युद्ध को छिड़ने से रोक लिया जाता? हां, संभव था। तमाम देशों की प्रगतिशील शक्तियां यह महसूस करती थीं कि अगर नया विश्वयुद्ध छिड़ गया तो वह मानव-जाति को अपार विपदाओं का शिकार वना देगा और आक्रमण और देशविजय का फासिस्ट राज्यों द्वारा छेड़ा गया अत्यंत प्रतिक्रांतिकारी युद्ध होगा। फासिज़्म इस वात को छिपाता नहीं था कि उसका उद्देश्य न सिर्फ प्रथम विश्वयुद्ध की भांति संसार का पुनर्विभाजन करना, वल्कि पूरे के पूरे राष्ट्रों को समूल नष्ट करना और गुलाम वनाना, विश्व पर अपना नस्लीय प्रभुत्व कायम करना भी था।

उन वर्षों में सोवियत संघ ही ऐसा एक मात्र राज्य था जो फासिस्ट आक्रांताओं पर अंकुश लगाये जाने तथा यूरोपीय शक्तियों द्वारा सामूहिक सुरक्षा की एक भरोसेमंद प्रणाली का निर्माण किये जाने के लिए आग्रह कर रहा था। वह सोवियत संघ ही नहीं, बल्कि उन तमाम जनगण और राज्यों के हित में होती जिन पर आक्रांताओं का खतरा मंडरा रहा था। चेकोस्लोवाकिया की सुरक्षा के लिए उत्पन्न वास्तविक खतरे को ध्यान में रखते हुए सोवियत सरकार ने म्यूनिख सौदे (सितंबर 1938) से ठीक पहले चेकोस्लोवाक सरकार को हिटलरी जर्मनी के अतिक्रमणों से अपनी स्वाधीनता की रक्षा करने में सैनिक सहायता की पेशकश की। इसके लिए सोवियत संघ के पश्चिमी सैनिक जिलों में महत्त्वपूर्ण सैनिक कदम भी उठाये गये, जैसे 76 पदातिक (इनफैंट्री) और अश्वारोही (कैवेलरी) डिवीज़नों, तीन टैंक सैन्यदलों, 22 टैंक ब्रिगेडों, सात किलेबंद क्षेत्रों और खासी वड़ी संख्या में हवाई व्यूह-समुच्चयों को सावधान कर दिया गया। किंतु ब्रिटेन और फ्रांस के दवाव में आकर चेकोस्लोवाकिया के शासक हलक़ों ने इस सहायता को ठुकरा दिया और घुटने टेक दिये। 'खुशामदियों' ने हिटलरी जर्मनी के आक्र-

मण को पूर्व की ओर, सोवियत संघ के विरुद्ध मोड़ने के लिए चेकोस्लोवाकिया का एक हिस्सा—वस्तुत: पूरा का पूरा मुल्क—उसके हवाले कर दिया।

जुलाई 1939 में सोवियत सरकार ने ब्रिटेन और फ्रांस से इस आशय की एक सन्धि का प्रस्ताव रखा कि अगर फासिस्ट गुट यूरोप में युद्ध छेड़े तो वे सभी संयुक्त सैनिक कार्रवाई करें। उसने 136 पदातिक और अश्वरोही डिवीज़नों, 5,000 भारी तोपों, 9,000-10,000 टैंकों और 5,500 तक सामरिक विमानों के विशाल सैन्यबल को इस कार्य के लिए नियोजित करने की अपनी तत्परता का ऐलान भी किया। किन्तु हुआ यह कि ब्रिटेन और फ्रांस के शासक इस वार्ता पर औपचारिक रूप से सहमत तो हो गये, लेकिन उनकी मंशा नाजी जर्मनी को मुंहतोड़ जवाव देने के लिए तीनों देशों की सैनिक कार्रवाइयों को संयुक्त करने की नहीं थी। अन्तत: अगस्त 1939 में पश्चिमी शक्तियों ने यह वार्ता भंग कर दी।

द्वितीय विश्वयुद्ध के छिड़ने से पहले के वर्षों में सोवियत संघ न केवल राजनयिक क्षेत्र में सक्रिय था, वल्कि उसने फासिस्ट गुट के आक्रमण के विरुद्ध संघर्ष में आर्थिक, वित्तीय और सैनिक दृष्टि से भी योगदान किया था। कई वर्षों तक वह जापानी सैन्यवाद के आक्रमण को नाकाम करने में चीन की सरकार और जनता को सहायता देता रहा। जब गणतंत्रीय स्पेन जर्मनी और इटली के सैनिक हस्तक्षेप का शिकार हो गया, तो सोवियत संघ ने स्पेनी जनता को मदद पहुंचायी। हजारों सोवियत नागरिकों ने स्पेन में फासिस्ट आक्रमणकारियों के विरुद्ध संघर्षरत जनता के प्रति अपनी एकजुटता का वास्तविक परिचय देते हुए स्वयंसेवकों के रूप में युद्ध किया। उनमें से बहुतेरों ने उस न्यायपूर्ण संघर्ष में अपना खून बहाया और अपने प्राणों की आहुति दी।

लेकिन प्रमुख पश्चिमी देश—ब्रिटेन, फ्रांस और अमरीका—के शासक हलके गैरदखलंदाजी की कुख्यात नीति का ही अनुसरण करते रहे, जिसका वास्तविक अर्थ था फासिस्ट गुट की आक्रामक कार्रवाइयों को खुला बढ़ावा देना।

प्रधानमंत्री नेविल चैंबरलेन जब हिटलर के साथ म्यूनिख समझौते पर हस्ताक्षर कर ब्रिटेन वापस आये, तो वहां के कुछ खास हलकों ने उनका बहुत ही भव्य स्वागत किया। उन्होंने हवाई अड्डे पर ऐलान किया कि मैंने यूरोप को युद्ध से बचा लिया। इस बात पर उनसे सारे अंग्रेज सहमत नहीं थे। यह एक हकीकत है कि विंस्टन चर्चिल ने, जो सोवियत संघ के मित्र तो कतई थे ही नहीं, तपाक से कहा कि म्यूनिख समझौता पश्चिमी देशों की नीति की एक बहुत बड़ी असफलता है और उससे लाभ केवल हिटलर को हुआ है। कुछ ब्रिटिश पत्रकारों ने लिखा कि चैंबरलेन यह आशा करते थे कि वे रिआयतों से भूखे फासिस्ट भेड़ियों का पेट पूरी तरह भर देंगे और सोचते थे कि अगर उनकी भूख बढ़ी तो ब्रिटेन

और फ्रांस के प्रति अपनी कृतज्ञता के वशीभूत हो वे पूरब की ओर मुड़ जायेंगे और सोवियत संघ को चिथड़े-चिथड़े कर डालेंगे।

इसकी खातिर हिटलर के सौ खून माफ कर दिये गये। हिटलर ने जर्मनी को विसैन्यीकृत करने और उसकी सशस्त्र सेना को सीमित करने से संबंधित वर्साई संधि के प्रावधानों का घोर उल्लंघन किया था। उसने राइनलैंड के विसैन्यीकृत क्षेत्र में जर्मन सैनिक भेज दिये थे। उसने आस्ट्रिया को जबरन अपने राज्य में समामेलित कर लिया था। उसने स्पेन में हस्तक्षेप किया था, चेकोस्लोवाकिया के सूदेतेनलैंड को अपने कब्जे में कर लिया था, लिथुआनिया से क्लाइपेदा क्षेत्र को छीन लिया था, और ऐसी ही और बहुत-सी हरकतें की थीं। लेकिन ये सब के सब माफ कर दिये गये। यहां इस बात का भी उल्लेख कर देना जरूरी है कि पश्चिमी और खास तौर से अमरीकी इजारेदारियों की मुक्तहस्त वित्तीय, आर्थिक और तकनीकी सहायता की बदौलत हिटलरपंथियों को शक्तिशाली युद्ध उद्योग को बहाल करने में ही नहीं, बल्कि और भी विकसित कर लेने में और फिर बाद में प्रतिशोध और नस्लवाद की भावना में दीक्षित अस्सी लाख की सेना को चटपट नियुक्त और सुसज्जित कर लेने में भी मदद मिली थी।

ब्रिटिश और फ्रेंच प्रतिक्रियावादी हलक़ों ने यूरोपीय सुरक्षा की अचूक व्यवस्था करने के लिए सोवियत संघ के साथ कोई भी समझौता करने से तो इनकार कर ही दिया, साथ-साथ वे सोवियत संघ के खिलाफ पूंजीवादी राज्यों के एक संयुक्त मोर्चे की स्थापना के लिए गुप्त योजनाएं भी बनाते रहे। म्यूनिख सौदे के बाद एक आंग्ल-जर्मन घोषणा प्रकाशित हुई थी जो तत्वतः एक अनाक्रमण संधि थी। उस पर हस्ताक्षर करने वालों ने 'एक-दूसरे के खिलाफ दुबारा युद्ध कभी न करने' की अपनी अभिलाषा की घोषणा की थी। कुछ ही समय बाद इसी प्रकार की एक फ्रेंच-जर्मन घोषणा भी प्रकाशित हुई थी। माना यह जाता था कि यह एक सामान्य बात है। लेकिन जब सोवियत संघ पर फासिस्ट देशों के गुट का मुकाबला अकेले अपने बूते पर ही करने की आन पड़ी और उसने अनाक्रमण संधि की जर्मनी की पेशकश को स्वीकार कर लिया (अगस्त 1939), तब 'क्रेमलिन की जघन्यता' और 'यूरोपीय हितों के साथ विश्वासघात' के बारे में लिख-लिख कर कितने पन्ने भर डाले गये (और आज दिन तक यह जारी है)! यही नहीं, कोशिशें दुनिया को यह जताने की की जाती हैं कि यह संधि वस्तुतः द्वितीय विश्वयुद्ध के मुख्य कारणों में एक थी।

सचाई यह है कि सोवियत संघ ने एक अत्यन्त जटिल और पेचीदा स्थिति में, जब पश्चिमी देशों में सोवियत-विरोधी भावनाएं भड़का रखी थीं, जर्मनी के साथ अनाक्रमण संधि की थी। हिटलरी नीति के आक्रामक रुझान के प्रति सजग

होने के नाते सोवियत सरकार जानती थी कि यह समझौता अल्पकालिक ही होगा और नाज़ी जर्मनी किसी भी पल उसका उल्लंघन कर सकता है। किन्तु विद्यमान स्थिति में यही सही कदम था। इसका उद्देश्य था युद्ध को वचाना या कम से कम टालना, और यदि इतने पर भी वह छिड़ ही जाये, तो उसके पैमाने और नतीजों को थोड़ा-वहुत सीमित करना। इतिहास ने सोवियत संघ को सही सावित किया। संधि पर हस्ताक्षर होने के वाद सोवियत जनता को जो शांति के लगभग दो साल मिल गये, उनसे यह सिद्ध हो गया कि यह कदम उठाये जाने लायक था।

सोवियत-विरोधी प्रचार में उस अनाक्रमण संधि से अन्य राज्यों के लिए उत्पन्न 'खतरे' और 'संकट' का आरोप लगाया जाता है। आखिर उससे किस प्रकार का 'खतरा' या 'संकट' पैदा होता था ? यहां इस मूल तथ्य को भी याद रखा जाना चाहिए कि ज़व ब्रिटेन और फ्रांस ने सोवियत संघ के साथ नाज़ी जर्मनी के खिलाफ़ सैनिक संश्रय का समझौता करने से इनकार कर दिया, तथा जव उन्हीं आंग्ल-फ्रेंच हलक़ों के निर्देश पर पोलैंड ने जर्मन हमले की संभावित स्थिति के लिए भी सोवियत सहायता स्वीकार करने से मना कर दिया, उसके वाद कहीं जाकर वह संधि की गयी थी। इस तथ्य पर इस कारण भी जोर देना जरूरी है कि सोवियत-जर्मन अनाक्रमण संधि को विद्वेषपूर्वक पोलैंड पर जर्मनी के हमले के कारणों में एक करार दिया जाता है।

पोलैंड और उसकी जनता को तो सोवियत-विरोध में अंधे होकर स्वयं उसके शासकों ने तथा उसके उन आंग्ल-फ्रेंच मित्रों ने ही बेच डाला था जिन्होंने पोलों को जर्मन खतरे से पोलैंड की अखण्डता की रक्षा करने की 'पक्की' गारंटियां दे रखी थीं और फिर पोलैंड की नाजुक घड़ी में उन्हें वेसहारा छोड़ दिया था। पोलैंड पर जर्मन आधिपत्य कायम हो जाने और सोवियत संघ के सीमांतों के निकट व्यापक मोर्चे पर हिटलरी गिरोहों के प्रकट हो जाने से ब्रिटेन और फ्रांस की अपेक्षा सोवियत जनता के लिए कहीं ज्यादा खतरा उत्पन्न हो गया था। तव भला सोवियत संघ नाज़ी जर्मनी द्वारा पोलैंड के हड़प लिये जाने में निमित्त कैसे वन सकता था ?

हिटलर ने बोल्शेविक खतरों के हौवे का, पश्चिमी देशों के प्रतिक्रियावादी हलक़ों के सोवियत-विरोध का इस्तेमाल उन्हीं देशों के विरुद्ध स्वयं अपनी आक्रा-मक नीति का अनुसरण करने के उद्देश्य से किया। आज दुनिया जानती है कि फासिस्ट फ्यूरर ने एक मौके पर नकचढेपन के साथ घोषित किया था : 'मुझे पूंजीवाद के पक्ष में जाना पड़ेगा और वर्साई शक्तियों को यह विश्वास दिलाकर कि जर्मनी लाल महाप्रलय के विरुद्ध आखिरी दुर्ग है, उन्हें वोल्शेविक हौवा खड़ा करके अंकुश में रखना पड़ेगा। हमारे लिए इस संकटपूर्ण दौर को झेल ले जाने,

वर्साई को समाप्त कर देने और फिर से अपनी हथियारबन्दी कर लेने का यही एकमात्र रास्ता है।"

पश्चिमी शक्तियां सोवियत संघ के खिलाफ जो खतरनाक राजनीतिक दांव चल रही थीं, उसके अनेक देशों के लिए विध्वंसकारी परिणाम हुए। सोवियत संघ के विरुद्ध बड़ा युद्ध छेड़ने से पहले हिटलरपंथियों ने यह तय किया कि पहले ऐसे अनेक पूंजीवादी देशों को जीत लिया जाये जो सैनिक दृष्टि से अपेक्षाकृत कमजोर हैं और फिर फ्रांस और ब्रिटेन पर धावा बोल दिया जाये। 1938 से 1940 के बीच आस्ट्रिया, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, बेल्जियम, नीदरलैंड्स, डेनमार्क, नार्वे, ग्रीस, युगोस्लाविया और उनके साथ-साथ एक प्रमुख यूरोपीय शक्ति —फ्रांस— फासिस्ट आक्रमण के सामने परास्त होते गये। ब्रिटेन की स्थिति बहुत ही ज्यादा बिगड़ गयी, और अब जर्मनी को उससे कोई गंभीर सैनिक खतरा न रह गया।

अधिकृत यूरोपीय देशों के भूक्षेत्र और आर्थिक और सैनिक संसाधनों के कब्जे में ले लिये जाने से जर्मनी की सैनिक क्षमता बढ़कर कई गुनी हो गयी और इसके बाद जर्मनी ने अपनी शक्ति सोवियत संघ के विरुद्ध युद्ध की तैयारियों पर केन्द्रित कर दी। इसका नतीजा बारबरोसा कूटनाम की रणनीतिक योजना के रूप में सामने आया। जर्मन सैन्य मुख्यालय ने उसे दिसम्बर 1940 में मंजूरी दी थी। यह सोवियत संघ को पूरी तरह तहस-नहस कर डालने और वहां के जनगण को गुलाम बना लेने और समूल नष्ट कर डालने की एक जघन्य योजना थी। इस मामले में हिटलर ने काफी स्पष्टवादिता का परिचय दिया था। उसने कहा था : "हमें रूसी सेना को तो नष्ट कर ही डालना चाहिए तथा लेनिनग्राद, मास्को और काकेशस पर कब्जा कर लेना चाहिए, साथ ही इसके अलावा भी कुछ कर डालना चाहिए। हमें धरती पर से उस देश का नामोनिशान मिटा देना चाहिए और उसकी जनता का मूलोच्छेद कर डालना चाहिए।" विश्व पर प्रभुत्व की हिटलर की योजना में सोवियत राज्य और उसकी सेना के कुचल डाले जाने का निर्णायक स्थान था।

युद्ध का खतरा उत्पन्न हो जाने से सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार ने देश की प्रतिरक्षा को सुदृढ़ करने और उसकी सशस्त्र सेना की समर-शक्ति बढ़ाने के हर उपाय किये। आज की ही तरह उस समय भी सोवियत संघ को ऐसे कदम उठाने को बाध्य होना पड़ा था और वे शुद्ध रक्षात्मक चरित्र के थे।

युद्ध संबंधी औद्योगिक क्षमता का निर्माण, खास तौर पर भारी उद्योग के क्षेत्र में, सोवियत संघ की उल्लेखनीय आर्थिक उपलब्धियों के आधार पर किया गया। केंद्रीय युद्ध-औद्योगिक आधार की परिपूर्ति करने के लिए वोल्गा क्षेत्र,

उराल और साइबेरिया में एक और युद्ध-औद्योगिक आधार का निर्माण शुरू कर दिया गया। 1941 की गर्मियों तक देश के 20 प्रतिशत गोला-बारूद कारखाने पूर्वी क्षेत्रों में कायम हो चुके थे। राज्य के बजट में प्रतिरक्षा के लिए आवंटनों में वृद्धि कर दी गयी। 1940 में वे 32.6 प्रतिशत और 1941 में 43.6 प्रतिशत पहुंच गये। युद्ध से ठीक पहले आधुनिक सैनिक विमानों का बड़े पैमाने पर उत्पादन शुरू हो गया। सोवियत संघ ने उन मझोले टी-34 और भारी केवी टैंकों का डिजाइन तैयार किया और उत्पादन शुरू कर दिया जो संसार के अपनी-अपनी कोटियों के सर्वश्रेष्ठ टैंक साबित हुए। 1940 और अगले साल के पहले छह महीनों में 1,864 नयी किस्म के टैंक निर्मित कर डाले गये। जून 1941 में राकेट छोड़ने के उन बहुखंड यंत्रों का बड़े पैमाने पर उत्पादन शुरू हो गया जिन्होंने कात्यूशा नाम से ख्याति अर्जित की। 1941 में गोला-बारूद का उत्पादन 1940 का तीन गुना पहुंच चुका था।

सितम्बर 1939 में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत ने सार्विक सैनिक सेवा का एक नया कानून पारित किया। जो लोग सैनिक सेवा में भर्ती हो चुके थे, उनकी सक्रिय सेवा की मियाद स्थल सेना में तीन साल और नौसेना में पांच साल बढ़ा दी गयी। 1939 से जून 1941 के बीच सोवियत सशस्त्र सेना का कुल बल बढ़कर 2.8 गुना हो गया और 50 लाख से ऊपर पहुंच गया। सोवियत वायुसैनिक प्रतिरक्षा को भी संबलित करने पर यथेष्ट ध्यान दिया गया तथा प्रतिरक्षा क्षमता बढ़ाने के लिए अन्य कई कदम उठाये गये।

यह बात सच है कि अभी बहुत कुछ करना शेष रह गया था। कुछ खास महत्वपूर्ण सैनिक उपायों की तामील तो अभी शुरू ही हो पायी थी। नयी किस्म के विमानों और टैंकों का उत्पादन अभी जितना हो पा रहा था, वह नाकाफी था। अभी और भी अधिक लारियों और ट्रैक्टरों की जरूरत बनी हुई थी। कई डिवीज़नों का बल निर्धारित स्तर से कम था।

मार्शल ज्यार्जी ज़ूकोव ने, जो युद्ध से ठीक पहले सोवियत सेना के मुख्य सेनापति थे. अपने संस्मरणों में लिखा है :

"मेरा कहना है कि कुल मिलाकर, और मुख्य रूप में, देश की प्रतिरक्षा के संगठन का काम सही दिशा में आगे बढ़ रहा था। अनेक वर्षों तक आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में हर या लगभग हर सम्भव प्रयास किया जाता रहा। लेकिन 1939 से लेकर 1941 के मध्य की अवधि में जनता और पार्टी ने देश की प्रतिरक्षा को सुदृढ़ बनाने के लिए हर प्रयास किया और हर साधन का इस्तेमाल किया।

"उन्नत उद्योग, सामूहिक कृषि प्रणाली, सार्वभौम साक्षरता, सोवियत राष्ट्रों की एकता और एकजुटता, समाजवादी राज्य की भौतिक और आत्मिक

शक्ति, जनता में व्याप्त देशभक्ति की उदात्त भावना और लेनिनवादी पार्टी का नेतृत्व, जिसने हरावल और चंदावल को एक में मिलाकर एक अखंड इकाई में वदल दिया था—इन्हीं सवसे सोवियत संघ की महान प्रतिरक्षा क्षमता निर्मित हुई थी, और यही फासिज्म के विरुद्ध संघर्ष में हासिल की गयी गौरवशाली विजय को सुनिश्चित वनाने वाला प्रधान हेतु थे।"

कठिन शुरूआत

"सोवियत संघ पर बर्बरतापूर्ण हमले की संपूर्ण और सारी जिम्मेदारी जर्मन फासिस्ट शासकों पर है।"

—22 जून 1941 के सोवियत सरकार के बयान से

बर्लिन के ट्रेप्टो पार्क में सोवियत सैनिक-मुक्तिदाता का एक विराट स्मारक है। उसके एक हाथ में हमलावरों को छिन्न-भिन्न कर डालने वाला खड्ग है, और दूसरे से उसने एक छोटी-सी बालिका को, जिसका उसने युद्ध की ज्वालाओं से उद्धार किया है, अपने सीने से वात्सल्य भाव से चिपका रखा है।

वर्दीधारी सोवियत युवक जिस रास्ते से होकर बर्लिन नगर, साम्राज्यीय चांसलरी और हिटलर के बंकर तक पहुंचा था, वह इस स्मारक तक आकर ही समाप्त हो जाता है। यह रास्ता अनेक यूरोपीय देशों से, जंगलों और पहाड़ों से होते हुए, नदियों और टैंक-रोधक खाइयों को लांघते हुए, पुख्ता किलाबंदियों और आग के अवरोधों को पार करते हुए, क्लेश और मृत्यु को झेलते हुए यहां तक आता है।

22 जून 1941 को नाज़ी जर्मनी ने युद्ध की घोषणा किये वगैर ही सोवियत संघ पर हमला बोल दिया। बड़े तड़के ही अपने दुमछल्लों के सैनिकों समेत जर्मन सेना ने सोवियत सेना की मोर्चे पर तैनात इकाइयों पर गद्दाराना हमला शुरू कर दिया।

एक बयान में सोवियत सरकार ने कहा : "हमारे देश पर किया गया अन-सुना हमला विश्वासघात की एक ऐसी कार्रवाई है जिसकी इतिहास में कोई मिसाल नहीं। सोवियत संघ और जर्मनी के बीच अनाक्रमण संधि हो चुकी है और सोवियत सरकार इस संधि के हर अनुच्छेद का ईमानदारी से पालन करती आयी है, किंतु इस सबके बावजूद हमारे देश पर यह हमला किया गया है...

सोवियत संघ पर बर्बरतापूर्ण हमले की संपूर्ण और सारी जिम्मेदारी जर्मन फासिस्ट शासकों पर है।" बयान के ये शब्द—"हमारा संग्राम न्यायपूर्ण है। दुश्मन को नष्ट ही कर दिया जायेगा। विजय सुनिश्चित है।"—सोवियत जनता का युद्धघोष बन गये।

लोकमत को गुमराह करने की कोशिश में हिटलरपंथियों ने ऐलान कर दिया कि जर्मनी बोल्शेविज़्म के सांघातिक खतरे से विश्व सभ्यता की रक्षा करने की कोशिश कर रहा है, कि उसने सोवियत सेना के आसन्न हमले को पहले ही रोक देने के लिए निवारक युद्ध शुरू किया है। इस अविश्वसनीय जालसाज़ी के धोखे में कोई न आया। स्वतंत्रता और लोकतंत्र का गला घोंटने वाले और विश्व पर प्रभुता कायम करने के आकांक्षी हिटलरी गुट के आक्रामक स्वरूप के पर्याप्त प्रमाण सारी दुनिया के जनगण को मिल चुके थे।

प्रमुख फासिस्ट प्रचारक फ्रिट्शे ने भी, जो हिटलर के चहेतों में एक था, नाज़ी युद्धापराधियों पर चलाये गये नूरेम्बर्ग मुकद्दमे में स्वीकार किया था: "हमारे पास सोवियत संघ पर यह आरोप लगाने का कोई आधार न था कि वह जर्मनी पर सैनिक धावे का विचार कर रहा था।" एक पश्चिम जर्मन इतिहासकार गैरहार्ड रिश्टर ने 22 जून 1951 को स्टटगार्टर ज़ाइटुंग में लिखा: "हमें इस नाज़ी किंवदंती की समाप्ति कर देनी चाहिए कि रूस के खिलाफ युद्ध एक अपेक्षित हमले से बचाव की कार्रवाई था।...वह यूरोप की रक्षा करने के लिए नहीं, बल्कि पूरे महाद्वीप पर प्रभुत्व कायम करने के लिए युद्ध था।"

सोवियत जनता को फासिस्ट गुलामी के खतरे से अपने देश की रक्षा करने के खातिर हथियार उठाने को मजबूर होना पड़ा था। वह अपनी स्वतंत्रता और स्वाधीनता के लिए प्राणपण से लड़ने को कृतसंकल्प थी। और इस प्रकार उस महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध की, नाज़ी आक्रांताओं के विरुद्ध न्याय्य मुक्ति युद्ध की शुरूआत हुई जो लगभग चार वर्षों तक—कुल 1,418 दिनों और रातों तक—चला!

युद्ध के आरंभ के चरण सोवियत संघ और उसकी सेना के लिए परम दुर्वह थे। एक तो दुश्मन ने औचक में हमला बोल दिया था, दूसरे, वह खास तौर पर मुख्य-मुख्य दिशाओं में जनबल और हथियारों की दृष्टि से अधिक समर्थ था, इससे उसे बहुत लाभ मिला, हालांकि वह अस्थायी ही रहा। नाज़ी कमान ने बारबरोसा योजना का अनुसरण करते हुए सोवियत संघ के खिलाफ 55,00,000 अधिकारियों और जवानों के 190 डिवीज़नों की एक विराट आक्रमण-सेना केंद्रित कर उसे कार्रवाई में झोंक दिया था। इस सेना को संबलित करने के लिए कुल 5,000 लड़ाकू विमानों के वायुसैनकि व्यूह संगठित कर रखे गये थे।

पश्चिमी सीमांत क्षेत्रों में सोवियत स्थलसेना और नौसेना का कुल बल

29,00,000 था। इसमें से भी युद्ध के पहले दिन के संग्राम में प्रतिरक्षा सैन्यवल के प्रथम सोपान के जो अधिकारी और जवान भाग ले सके थे, उनकी संख्या 9,00,000 से अधिक नहीं थी। नये प्रकार के टैंकों और विमानों की दृष्टि से भी दुश्मन कहीं ज्यादा—दुगुना, तीन गुना या उससे भी अधिक—समर्थ था। इसके अलावा सोवियत सैन्यबल को समय से सावधान और ठिकानों पर तैनात नहीं कियां जा सका था।

हिटलर की सेना ने आक्रमण की आकस्मिकता का तथा सामरिक वल और साजसामान में अपनी श्रेष्ठता का पूरा फायदा उठाया और युद्ध के आरंभिक चरणों में उसने काफी अधिक सफलताएं भी प्राप्त कीं। वह सोवियत संघ के पश्चिमी भूक्षेत्र में भीतर तक घुस आयी और सोवियत संघ के अनेक महत्त्वपूर्ण केन्द्रों के लिए उसने खतरा पैदा कर दिया।

सोवियत सेना को घमासान युद्ध करते हुए पूर्व की ओर पीछे हटते जाने को मजबूर होना पड़ा। लेकिन दुश्मन को युद्ध के विलकुल आरंभ के दिनों के ही सोवियत सैनिकों और सरहदी इलाकों की आवादी की ओर से दृढ़ और सच्चे अर्थों में शौर्यपूर्ण प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। नाज़ी सेनाओं से जिस सैर-सपाटे जैसे अनुभव के वायदे किये गये थे और पश्चिम में जिसका आनंद भी उन्होंने उठाया था, वह सब यहां हाथ नहीं लगा।

जर्मन स्थल सेना के मुख्य सेनापति जेनरल फ्रैंज़ हाल्डेर ने 24 जून की अपनी डायरी में दर्ज किया: "ऐसी भी मिसालें सामने आयीं जब सुरंगी तहखानों के गोलंदाजों ने आत्मसमर्पण करने के बजाय तहखानों समेद खुद को गोले से उड़ा दिया।" पांच दिनों बाद उसने अंकित किया: "लड़ाई के मोर्चे की खबरों से इस बात की पुष्टि हो जाती है कि हर कहीं जब तक एक भी रूसी जिंदा रहता है, वह लड़ता जाता है।"

आरंभ में रण का मुख्य भार सोवियत सीमांत रक्षकों को वहन करना पड़ा। नाजी चढ़ाई का मुकाबला सबसे पहले उन्हीं से हुआ। हमलावर दुश्मन सेना संख्या में कहीं ज्यादा बढ़-चढ़ कर थी, किंतु कारेलिया, वाल्टिक क्षेत्र, ब्येलोरूस, उक्रेन और मोल्दाविया में, सर्वत्र ही सरहदी चौकियों और दस्तों के एक-एक सैनिक, कमांडर और राजनीतिक शिक्षक ने आखिरी दम तक उससे टक्कर ली। ब्रेस्त किले के रक्षकों ने अविस्मरणीय पराक्रम दिखाया। वह छोटा-सा गैरिसन था और मुख्य सैन्यवल से विलकुल अलग-थलग पड़ गया था। ऊपर से नाज़ी डिवीज़न तोपों, टैंकों और विमानों के संवल के साथ खूंखार हमले पर हमले बोलता रहा। फिर मी उन मुट्ठी भर सूरमाओं ने एक महीने तक नाज़ियों का मुकाबला किया।

वाल्टिक क्षेत्र में सोवियत स्थल सेना, नौसेना और वायुसेना ने प्रचंड प्रति-

रोध किया। कर्नेल इवान चेर्न्याखोव्स्की के टैंक डिवीज़न और द्मित्री लेल्यु-शेंको के यंत्रीकृत सैन्यदल ने खास तौर पर शानदार शौर्य का परिचय दिया।

जेनरल इवान रूसियानोव के डिवीज़न ने वेरेज़ीना नदी पर लड़ते हुए महान रणकौशल का परिचय दिया। नाज़ियों ने उनके डिवीज़न की घेराबंदी करने की कई बार कोशिशें कीं, किंतु मुख्य सैन्यबल से अलग-थलग पड़ जाने के बाद भी वह साहस के साथ लड़ता रहा और दुश्मन को भारी क्षति पहुँचाता रहा।

उक्रेन में घमासान संग्राम हुए। युद्ध के आरंभिक दिनों में लुत्स्क, ब्रोदी, रोव्नो और दुब्नो क्षेत्र में एक प्रमुख द्वंद्वयुद्ध हुआ। इसे सोवियत यंत्रीकृत सैन्यदल ने जर्मन प्रथम बख्तरबंद दल के विरुद्ध जवाबी प्रहार के रूप में छेड़ा था। इस संग्राम की बदौलत नाज़ी किएव पर अपनी चढ़ाई की गति धीमी करने को विवश हो गये। जेनरल कोंस्तांतिन रोकोसोवस्की के यंत्रीकृत सैन्यदल और जेनरल किरिल मोस्कालेंको के तोपखाना ब्रिगेड ने विशेष शौर्य के साथ युद्ध किया।

सोवियत पायलटों ने भी वीरता से भरे पराक्रम दिखाये और अक्सर दुश्मन के विमानों से वे टक्कर मारते हुए जा भिड़ते रहे। मसलन, जून के अंतिम दिनों में लेनिनग्राद की रक्षा करते हुए स्तेपान ज़्दोरोव्त्सेव, मिखाइल ज़ुकोव और प्योत्र खारीतोनोव तो दुश्मन के विमानों को टक्करें मारकर भी ज़िंदा बच निकले।

निकोलाइ गास्तेलो की कप्तानी वाले विमान के चालकों ने असाधारण साहस का कारनामा दिखाया। हमले की कार्रवाई करके अपने अड्डे को लौटते समय विमान पर वार हो गया और उसमें आग लग गयी। चालकों ने छतरियों से कूदकर बच निकलने के बजाय जलते हुए विमान को एक ऐसे ठिकाने की ओर मोड़ दिया जहां दुश्मन की लारियों और इंधन के ट्रकों की भारी भीड़ जमा थी और उनके चारों ओर इंधन के टैंकों का तांता था। वे शूरवीर चालक तो वीरगति को प्राप्त हो गये, लेकिन दुश्मन को उनके जीवन की भारी कीमत चुकानी पड़ी।

सोवियत नाविकों ने भी साहस के साथ युद्ध किया। 22 जून 1941 को काला सागर बेड़े के जहाज़ों और स्थल-आधारित इकाइयों ने सेवास्तोपोल नगर पर नाज़ी हवाई हमले को नाकाम कर दिया। उत्तर में सोवियत सैनिकों ने उत्तरी बेड़े के नाविकों के कारगर समर्थन से मुर्मान्स्क नगर पर कब्जा करने तथा उसे लेनिनग्राद से जोड़नेवाले रेलमार्ग को काटने की दुश्मन की तमाम कोशिशों को विफल कर दिया। बाल्टिक बेड़े के लोगों को खास तौर पर विषम स्थिति का सामना करना पड़ा, लेकिन उन्होंने स्थलीय सैनिकों के साथ मिलकर बेड़े के मुख्य अड्डे तालिन नगर की वीरतापूर्वक रक्षा की, और जब दुश्मन का दबाव बहुत बढ़ गया, तो अधिकांश बेड़े को वहां से हटाकर क्रोन्स्तादत पहुंचाने की व्यवस्था की। यह एक ऐसी कार्रवाई थी, जो लेनिनग्राद की रक्षा करने के लिए अत्यंत महत्त्व-

पूर्ण थी।

संग्राम हर जगह छिड़ा रहा—स्थल पर, सागर में और वायु में। एक महीने से कम की हमलावरी की कार्रवाइयों में नाज़ी लगभग 1,00,000 सैनिकों; लड़ाई में उतारे गये लगभग आधे टैंकों और तकरीवन 1,300 विमानों से हाथ धो वैठे। अगस्त के उत्तरार्ध तक अकेले वेरमाश्ट की स्थल सेना के हताहतों की कुल संख्या 4,10,000 पहुंच चुकी थी। सोवियत सेना को भी निःसंदेह भारी क्षतियां उठानी पड़ीं, क्योंकि वह अत्यंत विषम परिस्थितियों में युद्ध में उतरी थी।

हताहतों की भारी संख्या के वावजूद नाज़ी उत्तरोत्तर नये सैन्यवल पहुंचाते रहे और आगे बढ़ने के लिए दवाव डालते रहे। सोवियत सेना दृढ़ प्रतिरोध करते हुए पूर्व की ओर पीछे हटने को विवश होती रही। जुलाई 1941 के मध्य तक शत्रु सैनिकों ने सोवियत संघ के पश्चिम में खासे बड़े क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया। लेनिनग्राद, स्मोलेन्स्क और किएव और देश के संपूर्ण दक्षिणी भाग के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया। सोवियत संघ पर सांघातिक खतरा मंडराने लगा।

नाज़ी नेता सोवियत संघ के विरुद्ध युद्ध के अपने अमानवीय दुरुद्देश्यों को छिपाते नहीं थे। सोवियत सरजमीं पर चढ़ाई बोल देने के वाद हिटलरपंथी वहां की आवादी के साथ घोर पशुता दिखाते रहे। वच्चों, बूढ़ों और स्त्रियों समेत नागरिकों को वे सामूहिक रूप में गोलियों का निशाना बनाते रहे। जिन सैनिकों और छापामारों को वे वंदी बना लेते, उन्हें यातनाएं देते। लाखों सोवियत नागरिकों को वे जबरी वेगार के लिए जर्मनी हांक ले गये। उन्होंने राष्ट्रीय सांस्कृतिक मूल्य की हर वस्तु को तथा आवासों और औद्योगिक उद्यमों को वर्वरतापूर्वक नष्ट कर डाला।

इतिहास ने एक हैवानी दस्तावेज वचा रखी है। वह है पूर्वी मोर्चे के सैनिकों को संवोधित नाजी कमान का एक संदेश। उसमें कहा गया है:

"आपके पास न भावना है, न विचार—युद्ध में इनकी जरूरत नहीं होती। आपके मन में दया और करुणा के जो भी भाव पैदा हों, उन्हें कुचल डालें और हर रूसी का, हर सोवियत नागरिक का वध कर डालें। अगर आपके सामने कोई बूढ़ा, कोई स्त्री या कोई वच्चा आ पड़े तो हिचकें नहीं—उसे मार डालें और इस प्रकार आप स्वयं अपनी रक्षा करें, अपने परिवार के लिए निरापद भविष्य निश्चित करें और स्वयं को शाश्वत महिमा से मंडित करें।"

कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार ने दुश्मन से लड़ने के लिए देश के समस्त संसाधनों को लामबंद करने के फौरी कदम उठाये। उस समय का नारा था: "हर प्रयास मोर्चे के लिए, हर प्रयास विजय के लिए।"

हरावल मोर्चे पर और चंदावल में युद्ध संवंधी प्रयासों का पुरअसर तौर पर

तालमेल करने के लिए 30 जून 1941 को एक आपात-निकाय की स्थापना की गयी और उसे पूरे देश में अखंड प्राधिकार प्रदान कर दिया गया। वह थी राज्य प्रतिरक्षा समिति जिसके अध्यक्ष जोसेफ स्तालिन थे। शीघ्र ही उन्हें सोवियत सशस्त्र सेना का सर्वोच्च सेनाधिपति भी नियुक्त कर दिया गया।

सोवियत सेना को कर्मियों और हथियारों से पुनःसज्जित किया गया। चटपट नयी इकाइयां गठित की गयीं। जून के अंत से 1 दिसंबर 1941 के बीच की अवधि में समरांगण की सेना को 291 नवगठित डिवीज़न और ब्रिगेड प्राप्त हो गये। (उल्लेखनीय है कि सैनिकों की संख्या की दृष्टि से जर्मन डिवीज़न सोवियत डिवीज़न के दुगुने आकार के थे।)

देशभक्ति की प्रबल भावना से प्रेरित हो सोवियत जनता ने स्वयंसेवक नगर-सेना के दस्ते, रेजिमेंट और डिवीज़न गठित कर लिये। इस आंदोलन का सूत्रपात मास्को और लेनिनग्राद के मजदूरों ने किया था। इस प्रकार कोई 60 पदातिक डिवीज़न और200 रेजिमेंट खड़े कर लिये गये। उनकी धुरी कम्युनिस्टों और तरुण कम्युनिस्ट लीग के सदस्यों द्वारा निर्मित थी। इनमें से अधिकांश इकाइयां युद्ध की अग्निर्दीक्षा से गुजरने के बाद नियमित सेना की इकाइयों में बदल दी गयीं।

पार्टी, सरकार, ट्रेड यूनियन और तरुण कम्युनिस्ट लीग के निकायों के अनुभवी कार्यकर्ता समरांगण की सेना में भेज दिये गये। युद्ध के पहले छह महीनों में 11,00,000 से अधिक कम्युनिस्ट तथा तरुण कम्युनिस्ट लीग के 20 लाख से अधिक सदस्य सशस्त्र सेना में भर्ती हो गये और इसने अनुशासन को कोठर बनाने तथा सैनिकों के मनोबल और सामरिक दक्षता में अभिवृद्धि करने में निर्णायक भूमिका अदा की।

कम्युनिस्ट पार्टी ने तथा सारी जनता ने ही पूरे के पूरे राष्ट्रीय अर्थतंत्र को और प्रथमतः उद्योग और परिवहन को युद्ध स्तर पर लाने, हथियारों, सामरिक उपकरणों और गोलाबारूद का उत्पादन बढ़ाने पर विशेष रूप में ध्यान दिया। यह जटिल कार्य उन विषम परिस्थितियों में संपन्न करना पड़ा जब देश के हाथ से महत्त्वपूर्ण आर्थिक क्षेत्र निकल-निकल कर दुश्मन के पास पहुंचते जा रहे थे। सोवियत जनता ने अल्प काल के भीतर 1,523 औद्योगिक उद्यमों को, जिनमें से 1,360 बड़े उद्यम थे, पूर्वी क्षेत्रों में ढोकर पहुंचा दिया और पुनः उत्पादन कार्य शुरू कर दिया, जो सचमुच एक शौर्य का करिश्मा था।

इन प्रयासों के फलस्वरूप 1941 के उत्तरार्ध में सोवियत संघ औसतन पूर्वार्ध के दुगुने से अधिक राइफलों, कार्बाइनों, मशीनगनों और सबमशीनगनों, फील्ड-गनों, मोर्टारों, टैंकों, सामरिक विमानों, बमों तथा तोपों और मोर्टारों के गोलों का उत्पादन करने लगा था। फिर भी एक तो सोवियत सेना को युद्ध-सामग्रियों की भारी क्षतियां उठानी पड़ी थीं, दूसरे नवगठित इकाइयों को शस्त्रास्त्रों से

सुसज्जित करने की आवश्यकता आ पड़ी थी, जिस कारण उसे अनेक प्रकार के शस्त्रास्त्रों और गोलाबारूदों की भारी कमी बनी ही रही।

कम्युनिस्ट पार्टी के आह्वान पर दुश्मन के चंदावल में एक विशाल छापामार आंदोलन उठ खड़ा हुआ। फलतः सोवियत संघ के नाज़ी-अधिकृत क्षेत्रों में लाखों लोग हमलावरों से लड़ते रहे।

सोवियत संघ पर नाज़ी जर्मनी के हमले से सारी दुनिया के प्रगतिशील लोगों में आक्रोश की लहर दौड़ गयी। नाज़ी आक्रांताओं से वीरतापूर्वक संग्राम में रत सोवियत जनता के प्रति करोड़ों सामान्य जन ने अपनी सहानुभूति व्यक्त की। उस समय सोवियत संघ की विदेश नीति का लक्ष्य था स्वातंत्र्यप्रिय राष्ट्रों के संयुक्त मोर्चे को दृढ़ करना तथा एक शक्तिशाली फासिस्ट-विरोधी संश्रय का निर्माण करना।

तूफानी हमले की योजना विफल

"हालांकि रूस विशाल है, फिर भी पीछे हटने को कोई जगह नहीं है : हमारे पीछे तो मास्को है।"

—वासिली क्लोचकोव, एक राजनीतिक शिक्षक जो मास्को की रक्षा करते हुए शहीद हो गये

जर्मन सैनिकों के पूर्व की ओर आगे वढ़ने के साथ सोवियत सेना का प्रति-रोध नाज़ी रणनीतिज्ञों की अपेक्षाओं के प्रतिकूल कमजोर पड़ने के बजाय अधिकाधिक सुदृढ़ होता गया। मोर्चे के अनेक क्षेत्रों में मोर्चापंक्ति अस्थायी तौर पर सुस्थिर हो गयी; सोवियत सैनिक उत्तरोत्तर जवाबी प्रहार करने लगे और दुश्मन को भारी क्षति पहुंचाने लगे। भूतपूर्व जर्मन जेनरल कुर्ट वॉन टिपेलस्किर्श ने अपने संस्मरणों में लिखा कि 1941 की जर्मनों की प्रथम सफल कारंवाइयों से न तो दुश्मन की सशस्त्र सेना चटपट विनष्ट हो सकी, न सोवियत सैनिकों के मनोबल और साहस का क्षय हो सका।"

फिर भी 1941 के ग्रीष्म और शरद में मोर्चे की स्थिति सोवियत सेना के लिए अत्यंत गंभीर बनी रही। पश्चिम, उत्तर-पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम के तीनों प्रमुख रणनीतिक क्षेत्रों में विराट संग्राम छिड़े हुए थे। पहल अभी भी नाज़ी कमान के पास थी। दुश्मन के बढ़ाव को रोकने के लिए मोर्चे पर और चंदावल में अपार प्रयास और महान बलिदान अपेक्षित थे।

तूफानी हमले या 'तडित युद्ध' की नाज़ी योजना को विफल करने में लेनिन-ग्राद, स्मोलेंस्क, किएव, ओदेसा और सेवास्तोपोल के पराक्रमी रक्षकों ने बहुत ही बड़ा योगदान किया।

लेनिनग्राद जाने वाले मार्गों पर बढ़ते हुए और फिर लंबी घेराबंदी के दौरान दुश्मन को लाखों सैनिक और बड़े परिमाण में शस्त्रास्त्र और साज-सामान गंवाने पड़े, किंतु वह रक्षकों के साहस और संकल्प को तोड़ न सका। मोर्चे और चंदावल

में कोई भेद न रहा—हर सैनिक लड़ता और उत्पादन कार्य करता, और हर नागरिक भी यही करता। लेनिनग्राद की जनता को 900 दिनों की नाकेबंदी के दौरान भूख, शीत, सतत गोलावारी और दुश्मन की अधिक समर्थ सेना से दुर्दांत संग्राम---ऐसी-ऐसी मुसीवतें झेलनी पड़ीं जिन पर आसानी से विश्वास ही नहीं होता। किंतु अंत में लेनिनग्राद की विजय हुई।

युद्ध के दौर में सोवियत जनता ने पराक्रम के जो अनगिनत करतव दिखाये, उनमें लेनिनग्राद की दृढ़निष्ठता के साथ की गयी रक्षा देशभक्ति और सामूहिक साहस और शौर्य के दृष्टांत के रूप में एक विशेष स्थान रखती है। लेनिनग्राद के रक्षकों ने हिटलर की सेना के एक खासे वड़े हिस्से को ऐसे समय में वहां जकड़े रखा जवकि वह मास्को की दिशा में आक्रमण में तेजी ला रही थी।

स्मोलेंस्क का संग्राम 1941 के ग्रीष्म की प्रमुख मुठभेड़ था। यह 650 किलोमीटर से भी ज्यादा विस्तृत एक व्यापक मोर्चे पर लड़ा गया एक घमासान संग्राम था जिसमें सैनिकों और हथियारों की वहुत ही वड़े परिमाण में शिरकत हुई थी। वहां 66 सोवियत डिवीज़न केंद्रित थे जिनमें से 20 आधे वल के थे। सैन्यवल और हथियारों की दृष्टि से दुश्मन काफी अधिक समर्थ था, किंतु वह मास्को के फाटकों को एक धक्के में 'तोड़कर खोल डालने' में सफल न हो सका। उल्टे वहां घनघोर युद्ध छिड़ गया जिसके दौरान कुछ गांव, नगर और सड़कें अनेक बार एक से दूसरे के कब्जे में जाती रहीं। नाज़ियों का आगे वढ़ने का क्रम धीमा पड़ गया। आक्रमणकारी को अपने मुख्य हमले की दिशा में इस दो महीने की लड़ाई में भारी कीमत चुकानी पड़ी। अनेक जर्मन डिवीज़न और रेजिमेंट, जिन्होंने मास्को की सड़कों से होते हुए कूच करने की योजना वनायी थी, स्मोलेंस्क के युद्धस्थल में नष्ट हो गये। अपनी वारवरोसा योजना को अमल में उतारने के दौरान नाज़ियों को यह पहली वार गहरा धक्का लगा था।

स्मोलेंस्क के संग्राम के दौरान ही सोवियत रक्षकों का जन्म हुआ था : उस संग्राम में जो इकाइयां सवसे अधिक साहसी, अनुशासित और रणक्षम थीं, उन्हें रक्षक इकाइयों के नाम से विभूषित किया गया। सितंवर 1941 में 100वें, 127वें, 153वें और 161वें पदातिक डिवीज़नों को इस सम्मान से अलंकृत किया गया और उन्हें क्रमशः पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे रक्षक डिवीज़न नाम से अभिहित किया गया। स्मोलेंस्क के संग्राम में ही एक नये सोवियत हथियार—राकेट छोड़ने के वहुखंड क्षेपण-यंत्र—का पहली वार प्रयोग किया गया जिससे दुश्मन वहुत ही डरने लगा था। सोवियत सैनिकों ने वड़े चाव से उसे कात्यूशा नाम दिया था।

1941 के ग्रीष्म और शरद में उक्रेन में भी विकराल संग्राम हुए। जुलाई के आरंभ से अगस्त के मध्य तक किएव के रक्षकों पर हिटलरपंथी भीषण किंतु

निरर्थक हमले बोलते रहे। सैनिकों और नगरसेना के दस्तों ने असाधारण शूरता के साथ नगर की रक्षा की। किएव पर कब्जा कर पाने में दुश्मन को एक माह और लग गया। सोवियत सैन्यबल को इस संग्राम में भारी क्षति उठानी पड़ी, किंतु आक्रांताओं को सफलता के लिए बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी : किएव में उसने 1,00,000 से अधिक सैनिक और काफी सामरिक साज-समान गंवाया। लेकिन सबसे महत्त्व की बात तो यह थी कि नाज़ियों के हाथ से समय निकला जा रहा था और वे अपने सैन्यबल को एक उत्तरोत्तर फैलते जा रहे मोर्चे पर बिखराने को बाध्य होते जा रहे थे।

काला सागर का एक प्रमुख बंदरगाह—ओदेसा नगर—73 दिनों तक अड़ा रहा, दुश्मन के विशाल सैन्यबल को वहां बांधे रहा और उसे उसने भारी क्षति पहुंचायी।

सेवास्तोपोल में 250 दिन और रात अनवरत घनघोर युद्ध छिड़ा रहा। नाज़ियों ने नगर पर तीन भरपूर हमले किये, किंतु सैन्यबल और सामरिक साज-सामान में अपनी खासी बड़ी श्रेष्ठता के बावजूद वे उस पर कब्जा कर पाने में असफल रहे। सेवास्तोपोल पिछली शताब्दी में रूसी सैनिक गौरव का नगर रहा है। उसकी ओर जाने वाले मार्गों पर लाखों नाज़ी सैनिक और अधिकारी मौत के मुंह में समा गये। सोवियत कमान ने सोवियत सैनिकों को जो सेवास्तोपोल नगर को खाली करने का आदेश दिया, उसका कारण था मोर्चे के दक्षिणी भाग में स्थिति का आम तौर पर प्रतिकूल होना। लेकिन यह नौबत कहीं जून 1942 में आयी।

नाज़ी नेता मास्को पर आधिपत्य कायम करने को सर्वोच्च महत्त्व देते थे, क्योंकि उनका यह विश्वास था कि सोवियत राजधानी का पतन होते ही सोवियत सेना का प्रतिरोध टूट जायेगा और युद्ध का जर्मनी की विजय के साथ उपसंहार हो जायेगा। इसी कारण दुश्मन ने मास्को क्षेत्र को सबसे महत्त्वपूर्ण माना और वहीं उसने अपने सर्वोत्तम डिवीज़नों का जमाव किया।

मास्को पर कब्ज़ा करने के सैनिक अभियान का कूटनाम था टायफून। इसमें योजना यह बनायी गयी थी कि सोवियत राजधानी को जाने वाले दूरदराज मार्गों पर—व्याज़्मा और ब्र्यान्स्क नगरों के बीच के क्षेत्र में—प्रचंड प्रहार कर सोवियत सेना को कुचल डाला जायेगा। नाज़ी कमान की योजना थी कि इससे मास्को का रास्ता साफ हो जायेगा और बाद में उस शहर को मलबे में बदलकर जल-प्लावित कर दिया जायेगा।

अक्तूबर और नवंबर 1941 में जर्मन सैनिकों ने मास्को पर दो बड़े हमले बोले। उनमें से पहले में कुल 18,00,000 सैनिकों, 1,700 टैंकों, 1,390 विमानों तथा 14,000 से अधिक गनों और मोर्टारों के 74 चुनिंदा डिवीज़नों ने भाग

लिया (जिनमें 22 बख्तरबंद और मोटर-सज्जित डिवीज़न शामिल थे)। उसका मुकाबला करने वाले सोवियत सैन्यबल में 12,00,000 सैनिक, 990 टैंक (अधिकांश हल्के टैंक), 677 विमान तथा 7,600 गनें और मोर्टारें शामिल थीं। दूसरे हमले में नाज़ियों ने युद्ध में सबसे तपे हुए अपने 51 डिवीज़न झोंक दिये।

स्थानीय आबादी के सक्रिय समर्थन से सोवियत सर्वोच्च कमान ने मास्को की प्रतिरक्षा सुदृढ़ करने के जोरदार उपाय किये। सैनिकों ने मास्को और आसपास के जिलों के 6,00,000 से अधिक निवासियों की सहायता से नगर को जाने वाले मार्गों पर किलेबंदियां कर लीं। कुमक भी ला दिये गये जिनमें साइबेरिया और सोवियत सुदूर पूर्व के कई नये डिवीज़न शामिल थे। मोर्चापंक्ति पर नगर सेना के डिवीज़न भी भेजे गये। मास्को की हवाई प्रतिरक्षा भी सुदृढ़ की गयी।

हालांकि दुश्मन सैन्यबल में अधिक समर्थ था, फिर भी सोवियत सैनिकों ने सोवियत राजधानी की रक्षा करने में असाधारण दृढ़ता और शौर्य का परिचय दिया। मास्को संग्राम के इतिहास की एक महान शौर्यगाथा जेनरल पानफिलोव के 316वें डिवीज़न के 28 सैनिकों ने अपने पराक्रम से लिखी (बाद में इस डिवीज़न को 8वीं रक्षक इकाई का नाम दे दिया गया)। इस छोटे-से दस्ते के नेता राजनीतिक शिक्षक वासिली क्लोचकोव थे। इस दस्ते पर वोलोकोलाम्स्क राजमार्ग की रक्षा करने का जिम्मा था। 16 नवबंर 1941 को इस दस्ते की मुठभेड़ दुश्मन के दर्जनों टैंकों से हो गयी। इन मुट्ठीभर सूरमाओं ने घमासान लड़ाई चलायी। वे एक-एक कर वीरगति को प्राप्त होते गये। किंतु दुश्मन को भी भारी क्षति उठानी पड़ी: उसके लगभग 20 टैंकों में आग लगा दी गयी।

सोवियत सैनिक एक के बाद दूसरे बख्तरबंद हमले को नाकाम करते हुए चार घंटे तक अड़े रहे। उस दस्ते का लगभग सफाया हो गया, लेकिन नाज़ी आगे नहीं बढ़ सके।

दुश्मन के टैंकों के हमलों को परास्त करने में सोवियत तोपचियों, इंजीनियरों, पदातिक सैनिकों और यहां तक कि कभी-कभी विमानभेदी तोपचियों ने भी अत्यधिक साहस और दक्षता का परिचय दिया। प्रशांत महासागरीय बेड़े के नाविकों की बटालियनों ने मास्को की रक्षा करने में अपनी विशिष्टता का सिक्का जमाया।

सोवियत पायलटों और विमानभेदी तोपचियों ने मास्को के आकाश की सफलतापूर्वक रक्षा की। एक लड़ाकू पायलट विक्तर तालालीखिन ने रात के समय दुश्मन के विमान को टक्कर मार दिया, जो अपनी तरह का पहला करतब था। एक और पायलट आलेक्सेइ कात्रिच बहुत अधिक ऊंचाई पर एक अन्य विमान को टक्कर मार देने वाला पहला सूरमा सिद्ध हुआ। दोनों पायलटों को सोवियत संघ के हीरो की उपाधि से विभूषित किया गया। मास्को की हवाई

प्रतिरक्षा इतनी सुदृढ़ थी कि चंद विमान ही नगर के क्षेत्र में घुसकर आ सके और उनमें से अधिकांश नष्ट कर डाले गये। मास्को क्षेत्र में कुल लगभग 1,400 नाज़ी विमान मार गिराये गये।

तुला का वीरतापूर्ण प्रतिरोध मास्को के मार्गों की रक्षा करने में अत्यंत महत्त्व-पूर्ण था। तुला नगर को एक अभेद्य दुर्ग में वदल दिया गया था। उस पर कब्जा कर पाना जेनरल गुडेरिअन के वख्तरवंद सैनिकों के सामर्थ्य से वाहर सिद्ध हुआ।

उधर दुश्मन सेनाओं के चंदावल में छापामार प्रतिरोध का विस्तार होता जा रहा था। अकेले मास्को क्षेत्र में 40 से अधिक छापामार दस्ते कार्यरत थे। ज़ोया कोस्मोदेम्यांस्काया का नाम तो दिलेरी और देशभक्ति का प्रतीक ही वन गया। वह मास्को की स्कूली वालिका थी और एक छापामार योद्धा थी जो एक लड़ते हुए एक वीरांगना की मौत मरी।

अपने देश की रक्षा करते हुए नौजवानों ने ही नहीं, वूढ़ों ने भी अपने प्राणों की वलि दी। शताब्दियों पहले इवान सुसानिन ने जिस प्रकार आत्मोत्सर्ग किया था, वैसे वलिदानों के अनेक उदाहरण महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध में देखने में आये। सुसानिन एक रूसी किसान था जिसने विदेशी आक्रांताओं के एक दस्ते को राह दिखाने की पेशकश कर एक दलदल में पहुंचा दिया जहां उनके समेत वह भी मौत का शिकार हो गया। संगीतकार ग्लिंका ने सुसानिन नाम के ही अपने ऑपेरा में उसे प्रधान चरित्र वनाया है। यहां इस प्रकार के आत्मवलिदान का केवल एक उदाहरण प्रस्तुत है।

वेलिकियो लुकी नगर के समीप के कुराकिनी गांव के 86 वर्षीय सामूहिक किसान मात्वेइ कुज़्मिन ने एक जर्मन स्की वटालियन को राह दिखाने की पेशकश की। जर्मन सोवियत इकाई को चंदावल में पहुंचने के सीधे रास्ते की टोह में थे। वह वूढ़ा किसान सारी रात दुश्मन के दस्ते को जंगलों और वीहड़ों से होते हुए गहरे हिम में घुमाता रहा। उधर उसके पौत्र वासिली ने सोवियत इकाई का पता लगा उसे खतरे की चेतावनी दे दी। पौ फूटने के साथ मात्वेइ कुज़्मिन ने जर्मन दस्ते को खुले में ला पहुंचाया जहां सोवियत सैनिक पहले से ही ताक लगाये वैठे थे। जव हिटलरपंथियों ने महसूस किया कि उस किसान ने उन्हें जाल में ला फंसाया है, उन्होंने उसे मार डाला, लेकिन फिर उन्हें भी कठोर प्रतिकार का सामना करना पड़ा। मात्वेइ कुज़्मिन को मरणोपरांत सोवियत संघ का हीरो घोषित किया गया।

मास्को के रक्षकों ने दुश्मन को वहुत ही वड़ी संख्या में हताहत किया। दिसंवर तक नाज़ी हमले का वेग समाप्त हो चुका था, जवकि सोवियत सेना मास प्रति मास अधिकाधिक शक्तिशाली होती जा रही थी। इससे सोवियत सेना के लिए यह संभव हो गया कि वह कालिनिन से येलेत्स तक एक विस्तृत मोर्चे पर

शक्तिशाली जवावी हमले के लिए गुप्त रूप में तैयारियां कर ले। यह जवावी हमला 5 दिसंवर को शुरू हो गया और दुश्मन हतवुद्धि रह गया। जवावी हमले का उद्देश्य था मास्को के उत्तर और दक्षिण से दुश्मन के तूफानी सैनिक दल को चकनाचूर कर डालना और बचे-खुचे को पश्चिम में दूरदराज ठेल देना।

दुश्मन ने सोवियत वढ़ाव को रोकने की कोशिश की, लेकिन वह नाकाम रहा। मास्को के आसपास के रणक्षेत्रों में टूटे-फूटे और पीछे छोड़ दिये गये फौजी साज-सामान विखरे रहे। मास्को के निकट दुश्मन 38 डिवीज़न परास्त हुए, जिनमें 11 वख्तरवंद डिवीजन भी शामिल थे। जवावी हमले के दौरान 60 नगरों समेत 11,000 वस्तियां मुक्त कर ली गयीं। मास्को पर अधिकार कायम करने की हिटलर की योजना विफल हो चुकी थी। सोवियत राजधानी के रक्षकों ने नाज़ी सेना की अजेयता के मिथक को तार-तार कर डाला था। मास्को के निकटवर्ती रणक्षेत्रों में उस सेना को द्वितीय विश्वयुद्ध की अपनी एक वड़ी हार का मुंह देखना पड़ा। यहीं से युद्ध की धारा में मोड़ आना शुरू हो गया।

मास्को के संग्राम में सोवियत संघ की विजय का ऐतिहासिक महत्त्व था। इससे दुश्मन का समर-तंत्र कंपित हो उठा। उसके अधिकारियों और सैनिकों का हौसला टूट गया। नाज़ी जर्मनी के दुमछल्लों की नजर में उसकी प्रतिष्ठा गिरने लगी। उससे सोवियत जनता और विश्व के स्वातंत्र्यप्रिय जनगण को फासिस्ट हमलावरों के विरुद्ध अपना संघर्ष और भी तेज़ कर देने को प्रेरणा मिली तथा अनेक यूरोपीय देशों में प्रतिरोध आंदोलन को वढ़ावा मिला।

मास्को के निकट मध्यवर्ती क्षेत्र में नाज़ियों के कुचल दिये जाने के साथ सोवियत सेना द्वारा 1941-42 के जाड़ों में शुरू किये गये भरपूर हमले के लिए जमीन तैयार हो गयी और संकेत मिल गया। पहल सोवियत सर्वोच्च कमान के हाथ में आ गयी।

सोवियत सैनिकों पर अव यह जिम्मा आ पड़ा था कि वे दुश्मन को जरा-सी भी मोहलत दिये विना और उसके सैन्यवल और साज-सामान को चकनाचूर करते हुए उसे पूरे के पूरे मोर्चे पर पश्चिम की ओर खदेड़ दें। नाज़ी कमान ने अपने सैनिकों को आदेश दिया कि जव तक एक भी व्यक्ति जिंदा रहे, तव तक लड़ते हुए वे अपने-अपने ठिकानों पर अड़े रहें: अपनी मोर्चेवंदी से पीछे हटने का अर्थ होगा कठोर सजा भुगतना। इस दौरान अनेक प्रमुख नाज़ी जेनरल कोप-भाजन वन गये और अपने पद से हाथ धो बैठे। किंतु हिटलर के सैनिकों को एक के वाद दूसरी मोर्चेवंदियों को छोड़ते जाने को वाध्य होना पड़ा।

जनवरी 1942 में सोवियत सेना ने एक विस्तृत मोर्चे पर हमला शुरू कर दिया। लेनिनग्राद से काला सागर तक फैले एक विशाल क्षेत्र में जीवन-मरण का संग्राम छिड़ गया। हालांकि सोवियत सेना इतनी सुसज्जित नहीं थी कि वह

दुश्मन को पूरी तरह उखाड़ फेंकती, फिर भी वह शानदार सफलताएं हासिल करती गयी।

शिशिरकालीन हमले के दौरान दुश्मन के तकरीबन 50 डिवीज़न ध्वस्त कर डाले गये। कुछ क्षेत्रों में दुश्मन को 100 से 350 किलोमीटर तक खदेड़ भगाया गया। मास्को, तुला और र्याज़ान क्षेत्रों से दुश्मन की सेना का पूरी तरह सफाया कर दिया गया तथा लेनिनग्राद, कालिनिन, स्मोलेन्स्क, ओरेल, कुर्स्क और खारकोव क्षेत्रों के कुछ हिस्सों और दोनवास को मुक्त करा लिया गया। युद्ध के शुरू होने के बाद से उस समय तक अकेले जर्मनी की स्थल सेना के हताहतों की संख्या 11,00,000 से ऊपर पहुंच चुकी थी। हमलावरों ने शास्त्रस्त्रों और साज-सामान से भी बड़े पैमाने पर हाथ धोया।

मार्शल अलेक्सांदेर वासिलेव्स्की ने लिखा : "इन जीतों का यह अर्थ था कि सोवियत सैन्यबल ने दुश्मन से रणनीतिक पहल छीन ली थी। उसने दुश्मन को बारबरोसा योजना में निर्धारित एक भी रणनीतिक लक्ष्य प्राप्त नहीं करने दिया था। सोवियत सेना के प्रचंड प्रहारों के नीचे बारबरोसा योजना ढह गयी और उसके सैद्धांतिक आधार—तूफानी हमले—के परखचे उड़ गये और नाज़ी नेतृत्व सुदीर्घ युद्ध की रणनीति अपनाने को बाध्य हो गया।"

इस तथ्य को एक चोटी के जर्मन कमांडर विल्हेल्म केटेल ने भी अनमने-पन के साथ स्वीकार किया था। नूरेम्बर्ग मुकदमे में जब उससे पूछा गया कि उसे इस बात का अहसास होना कब शुरू हुआ कि बारबरोसा योजना विफल हो रही है, केटेल ने सिर्फ एक शब्द कहा : "मास्को"।

ज्वार मुड़ चला

"हिटलर के राइख पर विपत्ति की विकराल छाया मंडराने लगी।"

—कोंस्तांतिन रोकोसोव्स्की

मास्को के संग्राम के वाद 1942 के वसंत और ग्रीष्म में सोवियत-जर्मन मोर्चे पर रणनीतिक पहल प्राप्त करने के लिए कठोर संघर्ष शुरू हो गया। आक्रांता ने पूर्वी मोर्चे पर 62,00,000 अधिकारियों और सैनिकों के 227 डिवीज़न केंद्रित कर दिये थे, जवकि रणक्षेत्र में सोवियत सेना का वल 51,00,000 था। इस प्रकार सैन्यवल में कुल मिलाकर वह अभी भी अधिक समर्थ था। दुश्मन के पास मझोले और भारी टैंक और नये प्रकार के विमान भी अधिक थे। किंतु नाज़ी कमान अव 1941 की भांति पूरे मोर्चे पर हमला शुरू करने में सक्षम नहीं रह गयी थी।

जर्मन कमान ने 5 अप्रैल 1942 के अपने निर्देश संख्या 41 में लक्षित किया कि सबसे पहले यह चाहिए कि दोन नदी के पश्चिम के सोवियत सैन्यवल को नष्ट कर डालने और फिर काकेशस के तमाम तेल-उत्पादक क्षेत्रों और उसके पहाड़ी दर्रों पर कब्जा कर लेने के उद्देश्य से समस्त सैन्यवल को दक्षिणी क्षेत्र की मुख्य सैनिक कार्रवाई पूरा करने पर केंद्रित किया जाये।

नाज़ियों ने 20 जून को कुर्स्क के पूर्व और दक्षिण में अपने हमलों के साथ ग्रीष्मकालीन हमलावरी की शुरुआत की और सोवियत रक्षापंक्ति में 150 से 400 किलोमीटर तक घुस जाने में सफलता पा ली। औद्योगिक दोनवास क्षेत्र और दोन के दाहिने तट के समृद्ध कृषिक्षेत्र पर कब्जा कर लेने के वाद उन्होंने स्तालिनग्राद को धमकाना शुरू कर दिया, रोस्तोव-ऑन-दोन पर आधिपत्य जमा लिया और वे काकेशस की तराई में जा पहुंचे।

17 जुलाई को स्तालिनग्राद की दिशा में लड़ाई छिड़ गयी और नवंबर के मध्य तक चार महीने पहले तो दोन के बड़े मोड़ पर और फ़िर स्तालिनग्राद क्षेत्र

में घमासान संग्राम मचा रहा।

नाज़ियों ने एक विशाल वायुसेना से संवलित 26 डिवीजन कार्रवाई में उतार दिये। जनबल में उनकी शक्ति सोवियत सेना से 70 प्रतिशत अधिक थी, गनों और टैंकों में 30 प्रतिशत और विमानों में 100 प्रतिशत अधिक।

मार्शल वासिली चुइकोव याद करते हुए बताते हैं : "हममें से जिन्होंने स्तालिनग्राद के संग्राम में लड़ा है, वे बता सकते हैं कि वहां की लड़ाई में हमारे सैनिक सर्वथा निर्भीक थे, वे सामने मौत के आ पड़ने पर भी पीछे नहीं हटते थे, बल्कि ऐसी दृढ़ता के साथ लड़ते रहते थे कि मरते-मरते भी अपने हथियारों को नहीं जाने देते थे, और जब वे मारे जाते थे तो पश्चिम की ओर ही मुंह किये होते थे।"

अगस्त के उत्तरार्ध में दुश्मन स्तालिनग्राद के प्रवेशमार्गों पर पहुंच गया। 23 अगस्त को वह स्तालिनग्राद के उत्तर के इलाके में वोलगा को पार कर गया। सोवियत रेज़र्व इकाइयां, एक मिश्रित नौसैनिक दस्ता और हथियारबंद मज़दूरों के दस्ते वहां रवाना कर दिये गये और उन्होंने कूच कर रहे दुश्मन के साथ गुत्थम-गुत्था शुरू कर दिया।

उस रोज़ दुश्मन ने शहर पर जबर्दस्त हवाई हमला किया और 24 घंटे के भीतर 2,000 उड़ानें भरीं। इस हमले के दौरान सोवियत पायलटों और विमान-भेदी तोपचियों ने दुश्मन के 90 विमान मार गिराये। मास्को के पास के युद्ध की ही भांति यहां भी विमानभेदी तोपचियों को अक्सर स्थल सैनिकों और टैंकों से लड़ना पड़ता था।

सोवियत टैंकभेदी राइफलमैनों ने भी दिलेरी के साथ युद्ध किया। 24 अगस्त को 33 बंदूकचियों के एक दस्ते ने बोल्शाया रोसोश्का के पड़ोस में दुश्मन को आगे बढ़ने से रोक दिया। दुश्मन ने उस टीले को घेर लिया जिस पर वह सोवियत इकाई काबिज़ थी और टैंकों से कई हमले किये, किंतु उनके प्रतिरोध को तोड़ पाने में वह असमर्थ रहा। दुश्मन का अपेक्षाकृत अधिक समर्थ सैन्यबल दो दिनों तक उस सोवियत इकाई से जूझता रहा और इस दौरान उसने 27 टैंक और 150 सैनिक गंवा दिये। बाद में वह इकाई घेराबंदी से बच निकलने और अपने रेजिमेंट से जा मिलने में सफल हो गयी।

सोवियत सर्वोच्च कमान ने रक्षात्मक कार्रवाइयों का नियंत्रण कभी नहीं खोया और वह युद्धरत इकाइयों की सहायता के लिए तत्काल पहुंच जाती रही। सितम्बर 1942 के आरंभ में स्तालिनग्राद मोर्चे के उत्तरी क्षेत्र में नये सैन्यबल भेज दिये गये और उससे एक अतिरिक्त वायुसेना संलग्न कर दी गयी। सोवियत सैनिकों ने प्रचंड प्रत्याक्रमणों द्वारा दुश्मन को बड़ी संख्या में हताहत किया।

स्तालिनग्राद मोर्चे के सैनिकों को नगरवासियों ने अत्यधिक सहायता पहुं-

चायी। इसके लिए उन्होंने नगरसेना दस्ते और टैंकभंजक बटालियनें गठित कीं। अकेले 24 और 25 अगस्त को 2,000 से अधिक स्वयंसेवक, जिनमें ज्यादातर कम्युनिस्ट और तरुण कम्युनिस्ट लीग के सदस्य थे, मोर्चे पर रवाना हुए। बाद में और भी 8,008 स्वयंसेवक नियमित सेना में भर्ती हो गये। अग्निज्वालाओं में लिपटा हुआ वह नगर अडिग खड़ा रहा और एक के बाद दूसरे भीषण हमले को नाकाम करता रहा।

सितंबर 1942 में नाज़ी सैनिकों ने, जिन्हें कुमक प्राप्त हो चुकी थी, स्तालिनग्राद पर चढ़ाई शुरू कर दी। नगर की सीमाओं के भीतर दो माह तक घनघोर लड़ाई चलती रही। हिटलर हर कीमत पर स्तालिनग्राद को हासिल कर लेने को कृतसंकल्प होकर अपनी सेनाओं को आगे बढ़ने को ललकारता रहा। नाज़ी प्रचार सेवाओं ने कई बार स्तालिनग्राद के पतन का ऐलान तक कर दिया। लेकिन वह नगर अविचल अड़ा रहा।

स्तालिनग्राद की रक्षा करने के सोवियत जनता के दृढ़ निश्चय को एक विख्यात कमीनदार (स्नाइपर) वासिली ज़ाइत्सेव ने बड़े अच्छे ढंग से व्यक्त किया था : "हमारे लिए वोलगा से परे धरती है ही नहीं।"

शहर में दिन-रात घमासान लड़ाई चलती रही, दीवालें ढहती रहीं, मकान जलते रहे और गोले और बम हर कहीं फूटते रहे। कुल मिलाकर स्तालिनग्राद के रक्षकों ने दुश्मन के 50 से अधिक तूफानी डिवीज़नों को वहीं बांध रखा था।

हिटलरपंथी स्तालिनग्राद पर कब्जा करने में कभी सफल नहीं हो पाये!

नवंबर के मध्य में स्तालिनग्राद संग्राम के रक्षात्मक चरण का अंत हो गया। चार महीने की लड़ाई में दुश्मन को अपार क्षति उठानी पड़ी : लगभग 7,00,000 लोग हताहत हुए और 1,000 से अधिक टैंक, 2,000 से अधिक गनें और मोर्टारें और 1,400 विमान नष्ट हो गये।

स्तालिनग्राद की जिस शौर्य के साथ रक्षा की गयी, उससे दुश्मन की योजनाएं अस्तव्यस्त हो गयीं। जर्मनी में ढोल बजा-बजाकर ग्रीष्म अभियान की सफलताओं के जो ऐलान किये जाते थे, उनका स्थान उत्तरोत्तर निराशा से भरी बातें लेने लगीं। स्तालिनग्राद में जर्मन हमले को रोक दिये जाने की सफाई देने की कोशिश में नाज़ी प्रचार झूठ का सहारा लेने लगा : दावा किया जाने लगा कि वहां हर जर्मन सैनिक पर लगभग बीस-बीस सोवियत सैनिक हैं।

किंतु एक ऐसा तत्त्व था जिसका नाज़ी नेतृत्व ने ठीक-ठीक आकलन नहीं किया था : सोवियत चंदावल सेना को जबर्दस्त रेज़र्व मुहैया कर रहा था। स्तालिनग्राद के रक्षकों की सहायता करने पूरा देश उमड़ पड़ा। सेना के हर युद्धरत अंग और सेवा की अधिकाधिक इकाइयां गठित होती जा रही थीं, जिनमें टैंक सैन्यदल तथा टैंक सेना और हवाई सेना भी शामिल थीं। मोर्चों को शस्त्रास्त्रों,

गाला-बारूद, साज-सामान और खाद्य पदार्थों से लदी ट्रेनों का अटूट सिलसिला रवाना होता रहता था। युद्ध में तप कर सोवियत सैनिकों की रणदक्षता बढ़ चुकी थी।

अधिकृत क्षेत्रों में छापामार आंदोलन अधिकाधिक बड़े पैमाने पर विकसित होता जा रहा था। छापामार योद्धाओं के अलग-अलग समूह मिलकर पूरी के पूरी इकाइयां गठित कर ले रहे थे। मई 1942 में छापामार आंदोलन का एक केंद्रीय मुख्यालय कायम हो गया। दिसंबर 1942 तक दुश्मन के चंदावल में कार्यरत लाखों छापामारों के हजारों समूहों ने केंद्रीय मुख्यालय के साथ नियमित संपर्क कायम कर लिया था।

इन तमाम तत्त्वों ने मिलकर वोलगा के महान संग्राम के ज्वार के रुख का उल्टी दिशा में मोड़ा जा सकना संभव बनाया। हमलावरों के प्रायश्चित्त की घड़ी निकट आती जा रही थी। सोवियत सशस्त्र सेना का मुख्य ध्येय अब यह हो गया था कि दुश्मन की प्रधान जमातबंदियों को नष्ट कर दिया जाये, पहल अपने हाथ में ले ली जाये और अधिकृत क्षेत्रों को मुक्त करने की कार्रवाई की शुरूआत कर दी जाये। इन कर्तव्यों को पूरा करने की दिशा में पहला महत्त्वपूर्ण कदम होना था स्तालिनग्राद पर एक प्रचंड प्रत्याक्रमण का शुरू कर दिया जाना।

यूरेनस कूटनाम की कार्रवाई की योजना इस प्रकार थी कि अलग-अलग दिशाओं से स्तालिनग्राद की ओर बढ़ते हुए वहां के दुश्मन के फौजी जमाव पर पार्श्वभागों से गहराई तक दोतरफा प्रहार शुरू कर दिये जायें और इसी क्रम में उसकी चौथी और छठी बख्तरबंद सेनाओं पर घेरा डाल दिया जाये।

दक्षिण-पश्चिम दोन और स्तालिनग्राद के तीन मोर्चों को यह कार्रवाई अमल में लानी थी। उनके संयुक्त सैन्यबल में 11,00,000 सैनिक, 1,463 टैंक और स्वचालित गन, 15,500 गन और मोर्टार और 1,350 विमान शामिल थे। उनका मुकाबला दुश्मन के 10,11,000 अफसरों और सैनिकों, 675 टैंकों और धावा गनों, 10,300 फील्ड गनों और मोर्टारों और 1,216 विमानों से था। सोवियत और जर्मन सैन्यबल लगभग समान शक्ति वाले थे। किंतु सोवियत कमांडरों ने कुशल पैंतरेबाजी और सैन्यबल के पुनर्विभाजन द्वारा मुख्य प्रहार की में दिशा 2 : 1 की या 3 : 1 तक की श्रेष्ठता हासिल कर ली।

स्तालिनग्राद में प्रमुख सोवियत हमला 9 नवंबर 1942 को शुरू हुआ। 23 नवंबर को एक महत्त्वपूर्ण घटना घटी: दक्षिण-पश्चिमी मोर्चे की अग्रिम इकाइयां सोवेत्स्की के समीप स्तालिनग्राद मोर्चे की इकाइयों से आ मिलीं। इससे स्तालिनग्राद में दुश्मन के फौजी जमाव की घेराबंदी पूरी हो गयी। दुश्मन के 22 डिवीज़न और चौथी और छठी बख्तरबंद सेनाओं की दर्जनों अलग-अलग इकाइयां—जिनमें अधिकारियों और सैनिकों की संख्या 3,30,000 तक थी —जाल

में घिर गये। सोवियत सैन्यवल ने घेरेवंदी का एक वाहरी और एक भीतरी वलय वना लिया, जिससे घिरे हुए दुश्मन सैनिक न तो घेरावंदी तोड़कर बाहर निकल सकें, न बाहर से सहायता प्राप्त कर सकें।

हिटलर ने जेनरल पाउलुस को आदेश दिया कि उसके सैनिक अपने मोर्चे पर अड़े रहें। नवंबर के अंत में नाज़ी कमान ने दोन ग्रुप नाम का सेनाओं का शक्तिशाली समुच्चय गठित किया। उसमें फील्ड मार्शल वॉन मैन्स्टीन के अधीन 30 डिवीज़न शामिल थे और उसकी जिम्मेदारी थी घिरे सैनिकों को वच निकलने में मदद देना।

सोवियत सर्वोच्च कमान इन घटनाओं का सूक्ष्मता से अवलोकन कर रही थी। उसने घिरे सैन्य समूह को नष्ट करने का काम फिलहाल स्थगित कर दिया और सोवियत सैन्यवल को यह आदेश दे दिया कि वह पाउलुस की सेना को छुड़ाने की दुश्मन की कोशिशों को नाकाम करे। दुश्मन के राहत दल पर प्रचंड प्रहार किये गये और उसमें जो बच रहे, उन्हें पीछे दक्षिण-पश्चिम की ओर हांक दिया गया।

दिसंबर के अंत तक वोल्गा और दोन क्षेत्र में स्थिति सोवियत सेनाओं के पक्ष में मोड़ ले चुकी थी। अव वे रोस्तोव की ओर बढ़ सकती थीं और काकेशस में दुश्मन सेना के चंदावल पर प्रहार कर सकती थीं।

पाउलुस की सेना के दिन लद चुके थे। उसकी दशा दिन-प्रतिदिन विगड़ती जा रही थी। निरंतर हवाई हमले और घनघोर गोलावारी के कारण उसे पल-भर की भी मोहलत नहीं मिलने पा रही थी। हिटलर की आज्ञाओं का पालन करते हुए दुश्मन अवश्यंभावी सर्वनाश के सामने आ पड़ने से बदहवास होकर लड़ रहे थे।

अकारण रक्तपात बचाने के लिए सोवियत कमान ने 8 जनवरी 1943 को दुश्मन को एक अल्टीमेटम जारी करते हुए कहा कि अव निरर्थक प्रतिरोध बंद कर दो। मानवीयता की भावना से भरी सोवियत पेशकश ठुकरा दी गयी।

सोवियत सैन्यवल ने 10 जनवरी 1943 को अपनी हमले की कार्रवाई फिर शुरू कर दी और 23 दिनों के घमासान युद्ध में दुश्मन के घिरे सैन्यसमूह को पूर्णत: विनष्ट कर डाला। 2 फरवरी को सोवियत सेना की विजय के साथ स्तालिनग्राद का संग्राम समाप्त हो गया। दोन और वोल्गा का स्तेपी और भी 1,47,000 अधिकारियों और सैनिकों की कब्रगाह वन गया। 91,000 से अधिक वंदी बना लिये गये। उनमें 2,500 अधिकारी और जेनरल थे। इनमें स्वयं पाउलुस भी एक था जो उस समय तक फील्ड मार्शल बनाया जा चुका था।

जर्मनी के मृतकों के अंतिम संस्कार की घंटियों की आवाज में उसकी स्तालिनग्राद की पराजय गूंज उठी। तीन दिन के मातम की सरकारी तौर पर घोषणा कर दी गयी।

स्तालिनग्राद के संग्राम में सोवियत विजय का सैनिक और राजनीतिक, दोनों दृष्टियों से अपार अंतर्राष्ट्रीय महत्त्व था। उसके साथ युद्ध की धारा ने सोवियत सघ के पक्ष में मोड़ लेना शुरू कर दिया और इसी के साथ सोवियत सरज़मीं से दुश्मन के सैनिकों को खदेड़ बाहर किये जाने का सिलसिला शुरू हो गया।

दुश्मन को होश गुम कर देने वाली अभूतपूर्व पराजय का मुंह देखना पड़ा। दोन क्षेत्र में, वोल्गा तट पर और स्तालिनग्राद में जर्मन सैन्यबल को 15,00,000 सैनिकों, 3,000 तक टैंकों और धावा गनों, 12,000 फील्ड गनों और मोर्टारों और 4,400 विमानों से हाथ धोना पड़ा।

हिटलर की सेना का हौसला बुरी तरह पस्त हो गया। एक भूतपूर्व नाज़ी जेनरल सीगफ्रीड वेस्टफाल ने कबूल किया : "स्तालिनग्राद की पराजय से जर्मन जनता और उसकी सेना, दोनों ही भयभीत हो गये। जर्मनी के इतिहास में इससे पहले कभी इतने सैनिक इतनी भयावनी मौत नहीं मरे थे।"

स्तालिनग्राद में जर्मन सेना की पराजय से राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष को बढ़ावा मिला और आक्रांताओं और उनके चाकरों के खिलाफ प्रतिरोध आंदोलन प्रबल हो उठा। युगोस्लाविया, फ्रांस, पोलैंड, बेल्जियम, ग्रीस, अल्बानिया और अन्य यूरोपीय देशों के देशभक्तों ने अपनी फासिस्ट-विरोधी कार्रवाइयों में तेजी ला दी और दुश्मन पर अधिक से अधिक जोरदार चोटें करने लगे।

सोवियत संघ की प्रतिष्ठा और भी बढ़ गयी।

अमरीका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी० रूज़वेल्ट ने स्तालिनग्राद नगर को एक प्रशस्तिपत्र भेजा। स्तालिनग्राद के शूरवीरों के कारनामे की अत्यधिक सराहना करते हुए उन्होंने लिखा : "उनकी गौरवशाली विजय ने हमले का ज्वार रोक दिया और मित्रराष्ट्रों के युद्ध में आक्रमण की शक्तियों के खिलाफ मोड़ ला दिया।"

जनवरी और मार्च 1943 के बीच सोवियत सेना ने लेनिनग्राद से काकेशस तक फैले मोर्चे पर हमला शुरू कर दिया। मुख्य प्रहारों की दिशा अभी भी दक्षिण-पश्चिम की ओर ही थी।

दक्षिणी मोर्चे के सैनिकों ने काकेशस से दुश्मन के फौजी समूह की वापसी के मार्गों को काट देने और उत्तर काकेशियाई मोर्चे के साथ मिलकर उसे नष्ट कर डालने के उद्देश्य से रोस्तोव की दिशा में हमला शुरू कर दिया। घेरेबंदी का खतरा देख दुश्मन ने आननफानन वापसी शुरू कर दी।

जनवरी के आरंभ से फरवरी के मध्य तक काकेशस में घनघोर संग्राम के दौरान सोवियत सैनिक 160 से 600 किलोमीटर तक आगे बढ़ गये। अधिकांश उत्तरी काकेशस, कुबान क्षेत्र तथा उक्रेन के पूर्वी क्षेत्र मुक्त कर लिये गये।

नाज़ी कमान ने तमाम प्रायद्वीप पर काबिज़ अपनी स्थल सेना के संघर्ष के

रूप में लगभग 1,200 विमानों की एक विशाल वायुसेना भेज दी। इसके बाद द्वितीय विश्वयुद्ध का सबसे बड़ा हवाई संग्राम छिड़ गया जिसमें कुल लगभग 3,000 विमानों ने भाग लिया और यह लगभग दो महीने चला। वायुसैनिक श्रेष्ठता हासिल करने के लिए इसके परिणाम का अत्यधिक महत्त्व था। नाज़ियों ने इसमें 1,100 विमान गंवाये थे। वे संग्राम में भी हार गये।

काकेशस का युद्ध, जो जुलाई 1942 से अक्तूवर 1943 तक चला था, महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध का एक गौरवशाली अध्याय था। वह स्तालिनग्राद की शौर्य-गाथा से घनिष्ठ रूप में जुड़ा था और सोवियत-जर्मन मोर्चे के दक्षिण क्षेत्र में छिड़ने वाले निर्णायक संग्रामों का अभिन्न अंग था। उस संग्राम में अनेक सोवियत कमांडरों और राजनीतिक प्रशिक्षकों ने उच्चकोटि की निपुणता का परिचय दिया था। उनमें कुछ विशिष्ट नाम ये हैं : 18वीं सेना के राजनीतिक विभाग के प्रमुख लियोनिद ब्रेझनेव, उस सेना के कमांडर कोन्स्तांतिन लेसेलिद्ज़े, वायुसेना के एक विश्रुत कमांडर कोन्स्तांतिन वेर्शिनिन, अज़ोव वेड़े के कमांडर सेर्गेइ गोर्श्कोव, एक श्रेष्ठ पायलट अलेक्सांदर पोक्रिश्किन जिन्हें वहां सोवियत संघ के हीरो के उनके कुल तीन सुनहले सितारों में से पहला प्राप्त हुआ था।

काकेशस के संग्राम का एक अविस्मरणीय पृष्ठ मालाया ज़ेम्ल्या (लघु प्रदेश) का सात माह चलने वाला युद्ध और नोवोरोसीस्क के संग्राम थे। नोवोरोसीस्क अव एक वीर नगर वन चुका है। लियोनिद ब्रेझनेव की पुस्तक लघु प्रदेश में इन घटनाओं का वर्णन किया गया है।

1943 में सोवियत सेना ने एक साथ कई दिशाओं में हमले की कार्रवाइयां चलायीं।

वोरोनेज़ और ब्र्यान्स्क मोर्चों के सैनिकों ने दुश्मन की सेनाओं के 'बी' समूह पर जोरदार प्रहार किये और फरवरी के मध्य तक उन्हें 200-300 किलोमीटर पश्चिम खदेड़ दिया था तथा वोरोनेज़, कुर्स्क, तथा वेल्गोरोद और खारकोव नगरों को मुक्त कर लिया था।

उसके बाद दोनवास और रोस्तोव क्षेत्र की वारी आयी। काकेशस से हटने के बाद दुश्मन ने वहां विशाल सैन्यशक्ति का जमाव कर लिया था। लड़ाई वहुत घमासान हुई। दक्षिण-पश्चिमी मोर्चे ने 600 किलोमीटर के विस्तार में हमला किया और 130 से 230 किलोमीटर तक आगे बढ़कर दोनबास के पूर्वोत्तरी भाग को मुक्त कर लिया। 14 फरवरी को दक्षिणी मोर्चे ने दुश्मन को रोस्तोव से खदेड़ दिया और वह मिउस नदी तक पहुंच गया।

वहरहाल, सोवियत सैन्यबल मोर्चे पर वहुत ही ज्यादा फैला हुआ था, उसके रसद आधार सैनिकों से पीछे छूट गये थे और हवाई अड्डे बहुत दूरदराज थे। दुश्मन ने इसका फायदा उठाया। नाज़ियों ने अपने सैन्यबल को फिर से

जुटाया और प्रत्याक्रमण शुरू कर दिया। सोवियत सैनिक पूर्व की ओर उत्तरी दोनेत्स नदी के पार तक पीछे हटते जाने को वाध्य हो गये। इससे दुश्मन को वोरोनेज़ मोर्चे के सैनिकों पर प्रहार करने और उन्हें पीछे हटने को वाध्य करने का मौका मिल गया। 16 मार्च को खारकोव और उसके वाद वेल्गोरोद को छोड़ना पड़ा। उसीके वाद दुश्मन का आगे वढ़ना रोक दिया गया। खारकोव के समीप सोकोलोवो के पड़ोस में हुए घनघोर संग्रामों में एक स्वतंत्र चेकोस्लोवाक बटालियन ने सोवियत सैनिकों के कंधे से कंधा मिलाकर साहसपूर्वक भाग लिया।

दुश्मन अपनी शक्ति का क्षय हो जाने के वाद वचाव की स्थिति में आ गया। दोनवास और कुर्स्क में सोवियत सैन्यवल पर घेरा डालने की उसकी योजनाएं विफल हो गयीं।

साथ ही सोवियत सेना ने स्मोलेंस्क की आम दिशा में मोर्चे के पश्चिमी क्षेत्र पर हमला शुरू कर दिया। उसने 130 से 160 किलोमीटर तक आगे बढ़ाते हुए दुश्मन का र्ज़ेव-व्याज़मा हमले का अड्डा नष्ट कर दिया।

1943 के आरंभ में लेनिनग्राद में चिरप्रतीक्षित घटना घटी। 12 से 18 जनवरी के वीच नगर की नाकेवंदी तोड़ दी गयी और शेष देश के साथ उसका स्थलीय संचार वहाल कर लिया गया।

कुल मिला कर सोवियत-जर्मन मोर्चे पर दूसरे शिशिरकालीन अभियान में दुश्मन के 100 से अधिक डिवीज़न उखाड़ फेंके गये और उसने लगभग 17,00,000 सैनिक गंवा दिये तथा वह 600 से 700 किलोमीटर तक पश्चिम ठेल दिया गया। महत्त्वपूर्ण औद्योगिक और कृषि क्षेत्र मुक्त कर लिये गये।

उसके वाद युद्ध की तीसरी गर्मी क़रीव आने लगी। मोर्चों पर सन्नाटा था। दोनों पक्ष नयी भीषण मुठभेड़ों के लिए कटिवद्ध हो रहे थे।

हिटलर और उसके जेनरलों ने तीसरी गर्मी के अभियान पर खास तौर पर उम्मीदें टिका रखी थीं। वे स्तालिनग्राद की पराजय का प्रतिशोध लेने को व्यग्र हो रहे थे और 1943 में चामत्कारिक विजय हासिल करने के तरीकों की टोह में थे।

नाज़ी सैन्य मुख्यालय की नज़रें कुर्स्क शिलाकोटि (किलेवंद पहाड़ी) पर टिकी थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि उससे कुर्स्क की दिशा में उत्तर में ओरेल के आसपास और दक्षिण में वेल्गोरोद के आसपास सोवियत सेनाओं पर प्रहार करने के लिए अनुकूल परिस्थितियां सुलभ हो जाएंगी। जर्मन कमान ने वहां एक विशाल सोवियत सैन्य-समुच्चय की घेरेवंदी कर लेने और उसे नष्ट कर डालने की योजना बनायी। इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर नाज़ी सैन्य मुख्यालय ने बड़े पैमाने की सिटेडेल कूटनाम वाली हमले की कार्रवाई की रूपरेखा बनायी। इस कार्रवाई के जरिए उसने फिर से पहल हासिल कर लेने और युद्ध की धारा को अपने पक्ष में मोड़ लेने की आशा की थी।

चुनिंदा नाज़ी डिवीज़न और सेना के हर लड़ने वाले अंग के विशाल सैनिक दल कुर्स्क शिलाकोटि पहुचा दिये गये। उनमें 16 बख्तरबंद और यंत्रीकृत डिवीज़नों समेत कुल 50 डिवीज़न शामिल थे। उस सैन्य-समुच्चय का संयुक्त बल लगभग 9,00,000 सैनिकों, 10,000 तक गनों और मोर्टारों, लगभग 2,700 टैंकों और 2,000 से अधिक विमानों का था। नाज़ी अपने टाइगर और पैंथर श्रेणी के नये टैंकों की जा टकराने की क्षमता का भरोसा किये हुए थे।

सोवियत कमान ने नाज़ी योजनाओं को भांप लिया और यह फैसला किया कि वह आगे बढ़ने के बजाय सुसंगठित प्रतिरक्षा का सदुपयोग करे, जिससे वह जर्मनी की प्रहारक शक्ति का क्षय कर सके और फिर बिना थमे प्रत्याक्रमण करके दुश्मन को बुरी तरह परास्त कर सके।

कुर्स्क शिलाकोटि के आसपास 250 से 300 किलोमीटर भीतर तक शक्तिशाली प्रतिरक्षा पंक्तियां कायम की गयीं। वे शत्रु के किसी भी प्रहार को झेल ले जाने और इस प्रकार बाद के प्रत्याक्रमण के लिए आधार तैयार करने में सक्षम थीं। कुर्स्क के उत्तर और दक्षिण के प्रतिरक्षा क्षेत्रों को सुदृढ़ करने पर, जहां दुश्मन द्वारा मुख्य प्रहार किये जाने की उम्मीद कर रखी गयी थी, विशेष ध्यान दिया गया। स्थानीय आबादी ने प्रतिरक्षा के निर्माण में सक्रिय रूप में सहायता दी। मसलन, जून में लगभग 3,00,000 स्थानीय निवासियों ने ऐसे कार्य में भाग लिया।

मध्यवर्ती और वोरोनेज़ मोर्चों की इकाइयों ने कुर्स्क शिलाकोटि के विस्तृत क्षेत्र में मोर्चा लगा लिया। चंदावल में एक शक्तिशाली रणनीतिक रेज़र्व—स्तेपी मोर्चे—को तैनात कर दिया गया।

मध्यवर्ती और वोरोनेज़ मोर्चों में 13,00,000 से अधिक अधिकारी और सैनिक लगभग 20,000 गनें और मोर्टार, 3,444 टैंक और स्वचालित गनें तथा 2,172 विमान थे। सोवियत सैन्यबल 1943 की गर्मियों में बचाव और हमले दोनों तरह की कार्रवाइयों के लिए जितनी अच्छी तरह सन्नद्ध हो गयी थी, उतनी पहले कभी नहीं हुई थी।

5 जुलाई को सवेरे ओरेल के दक्षिण और बेल्गोरोद के उत्तर में जमकर समर छिड़ गया। हजारों तोपें और मोर्टारें घड़घड़ाने और गरजने लगीं और दुश्मन के हवाई बेड़े और टैंकों और धावा गनों के रेले सोवियत प्रतिरक्षा पर गोलाबारी करने लगे। यह कुर्स्क शिलाकोटि के ऐतिहासिक संग्राम का, उस संग्राम का श्रीगणेश था जो अपने विस्तार और सघनता में अभूतपूर्व था।

दुश्मन सैन्यबल में समर्थतर नहीं था, इसलिए उसने द्रुत कार्रवाई का सहारा लिया और टैंकों और मोटरचालित पदातिकों के धावों से व्यूह तोड़ डालने की

कोशिश की। उसने आशा की थी कि गहराई में और पार्श्व भागों में पूर्वापेक्षित अपनी सफलता का वह सदुपयोग कर ले जायेगा।

सोवियत तोपचियों ने टकों के हमलों को नाकाम करने में अपार साहस और कौशल का परिचय दिया। कर्नल रुकोसुयेव के तीसरे टैंक-ध्वंसक ब्रिगेड ने खास तौर पर कमाल कर दिखाया। उसने चार दिनों में 20 हमले नाकाम किये और 140 टैंक नष्ट कर डाले। कैप्टेन जी० इगिशेव की बैटरी ने एक ही दिन में 19 टैंक नष्ट कर डाले। इस बैटरी के सारे गनर मारे गये, लेकिन उन्होंने अपने प्राणों की बाज़ी लगाकर दुश्मन के बढ़ाव को रोक दिया। नाज़ियों ने 42,000 अधिकारी और सैनिक तथा 800 टैंक गंवा दिये, किंतु वे एक संकीर्ण पट्टी में कुल जमा-पूंजी 10 से 12 किलोमीटर तक घुसने में कामयाब हो पाये।

कुर्स्क शिलाकोटि के दक्षिणी भाग में बेल्गोरोद के उत्तर में भीषण संग्राम चलता रहा। दुश्मन के टैंकों और धावा गनों और विमानों के रेले पर रेले सोवियत मोर्चेबंदियों पर हमले करते रहे। किन्तु कुर्स्क के रक्षक मौत की परवाह किये बिना निर्भीक होकर लड़े।

दुश्मन को अपार क्षतियां उठानी पड़ रही थीं, किन्तु इसके बावजूद वह नये-नये सैनिक दल झोंकता रहा। मोर्चे की एक तंग पट्टी में अपने सैन्यबल को अपेक्षाकृत काफी अधिक शक्तिशाली बना लेने के बाद वह कुछ दिनों के भीतर सोवियत प्रतिरक्षा में 30 से 40 किलोमीटर की गहराई तक दरार डालने में सफल हो गया।

कोरोची बस्ती के दक्षिण-पश्चिम में जेनरल मिखाइल शुमिलोव की कमान में रक्षी सेना ने हिटलरपंथियों के हमलों का बहादुरी के साथ जवाब दिया। 73वें रक्षी डिवीज़न की 24वीं रेजिमेंट के सैनिकों ने क्रुतोइ लोग गांव के पास असाधारण साहस और पराक्रम का परिचय दिया। 9 जुलाई को उन पर 120 टैंकों के साथ हमला किया गया जिनमें 35 टाइगर टैंक थे। उसी के बाद बड़ी संख्या में सबमशीनगनरों ने हमला कर दिया। संग्राम 12 घंटों तक चला। अत्यंत विषम परिस्थितियों में लड़ते हुए रक्षी सैनिकों ने कई भीषण हमले नाकाम किये तथा 39 टैंक और लगभग एक हज़ार सैनिकों का सफाया कर डाला।

12 जुलाई को प्रोखोरोव्का के समीप युद्धों के इतिहास का अद्वितीय टैंक संग्राम हुआ। कुमक पहुंच जाने के बाद वोरोनेज़ मोर्चे ने दुश्मन के टैंक-समुच्चय पर, जो जबरन सोवियत मोर्चेबंदियों में घुसता चला आया था, प्रचंड जवाबी प्रहार किया। जेनरल पावेल रोत्मिस्त्रोव की रक्षी टैंक सेना को युद्ध में लगा दिया गया और एक ऐसा गुत्थमगुत्था शुरू हो गया जिसमें लगभग 1,200 टैंकों ने भाग लिया। संग्राम सारे दिन चलता रहा, इंजन गरजते रहे,

बम मौर गोले फटते रहे, सैंकड़ों टैंक जलते रहे और गर्द और धुएं के बादल युद्धस्थल को आच्छादित करते गये।

कुर्स्क शिलाकोटि के संग्राम में अनेक सोवियत पायलटों ने कीर्ति प्राप्त की। उनमें इवान कोज़ेदूब, अलेक्सेइ मारेस्येव और अलेक्सांदर गोरोवेत्स जैसे श्रेष्ठ पायलट शामिल थे। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य लेफ्टिनेंट गोरोवेत्स का पराक्रम तो उड्डयन के इतिहास में अद्वितीय है। एक ही मुठभेड़ में उन्होंने नौ विमान मार गिराये। उन्हें मरणोपरांत सोवियत संघ के हीरो की उपाधि से अलंकृत किया गया।

सोवियत भूक्षेत्र में तैनात फ्रेंच नार्मंदी स्क्वैड्रन के कर्मियों ने भी महान शौर्य का प्रदर्शन किया।

कुर्स्क का बहुप्रचारित जर्मन हमला अंततः विफल हो गया।

12 जुलाई को सवेरे पश्चिमी और ब्र्यान्स्क मोर्चों के सैनिकों ने ओरेल की दिशा में हमला शुरू कर दिया। तीन दिनों बाद मध्यवर्ती मोर्चा उनसे आ मिला। दुश्मन ने हर जगह कठोर प्रतिरोध किया। अपने पास विशाल रेज़र्व मौजूद होने के नाते सोवियत कमान प्रहारों की प्रचंडता बढ़ाती गयी और उसने दुश्मन को पीछे हटने को मजबूर कर दिया। 5 अगस्त को ओरेल मुक्त करा लिया गया। और भी दो हफ्ते की घनघोर लड़ाई के बाद दुश्मन का ओरेल स्थित हमले का अड्डा समाप्त कर दिया गया। वहां दुश्मन के 15 डिवीज़नों को परास्त किया गया और शेष को 150 किलोमीटर पीछे ठेल दिया गया। कुर्स्क शिलाकोटि का उत्तरी भाग सीधी रेखा में ला दिया गया।

5 अगस्त को ही सोवियत सैनिकों ने बेल्गोरोद को भी मुक्त किया। मास्को ने ओरेल और कुर्स्क की मुक्ति का अभिनंदन उस दिन तोपखाने और आतिश-बाजी के अभिवादन के साथ किया। उसके बाद ऐसे अभिवादन एक परंपरा बन गये।

सोवियत सेना के आगे बढ़ने के क्रम को रोकने की दुश्मन की बदहवासी से भरी सारी कोशिशें असफल हो गयीं। खारकोव के रेलमार्ग को काटकर स्तेपी मोर्चा उस नगर पर पश्चिम से घेरा डालने को उद्यत हो गया। उसी समय उत्तर और पूर्व से भी सोवियत सैनिक बढ़े चले आ रहे थे। 23 अगस्त को खारकोव पर एक तूफानी हमला बोलकर कब्ज़ा कर लिया गया। मास्को ने उस विजय का भी अभिवादन किया। दुश्मन का बेल्गोरोद-खारकोव समुच्चय ध्वस्त कर दिया गया और अन्ततः पूरी की पूरी कुर्स्क शिलाकोटि की सीधी सरहदों को बहाल कर लिया गया।

सोवियत सशस्त्र सेना कुर्स्क के संग्राम में अंत में विजयी हुई और उसे स्थायी रणनीतिक पहल हस्तगत हो गयी। कुर्स्क में नाज़ियों को ऐसी बुरी तरह मुंह की

खानी पड़ी और इतनी भारी क्षति उठानी पड़ी कि फिर उससे निकल पाना उसके लिए असंभव हो गया। पचास दिनों की लड़ाई में उसके 5 लाख से अधिक सैनिक हताहत हुए, तथा 1,500 टैंक, 3,000 गनें और 3,700 से अधिक विमान नष्ट हो गये। सोवियत वायुसेना ने अव हवाई वरिष्ठता हासिल कर ली थी।

कुर्स्क में सोवियत सेना ने बचाव और हमला, दोनों ही मामलों में सामूहिक शौर्य और महान रणकौशल का परिचय दिया। नाज़ियों द्वारा रचे गये इस मिथक का गुब्बारा फूट गया कि सोवियत सेना की रणनीति का स्वरूप 'मौसमी' है। गर्मियों में उसने दुश्मन की जाड़ों से भी ज्यादा पिटाई की। हालांकि यूरोप में दूसरा मोर्चा नहीं खुला था, फिर भी नाज़ी जर्मनी अकेले सोवियत योधन-शक्ति के बल पर अव विनाश के कगार पर पहुंचा दिया गया था।

कुर्स्क के संग्राम पर टिप्पणी करते हुए मार्शल कोंस्तांतिन रोकोसोव्स्की ने लिखा था : "···सोवियत जनता और उसकी सशस्त्र सेना ने युद्ध में एक अमूल्य नया मोड़ ला दिया था। हमारी कमान ने पहल हासिल कर ली थी और उसे फिर कभी नहीं गंवाया था।"

मार्शल ज्यार्जी ज़ुकोव ने कहा : "यह स्पष्ट हो गया कि अव जर्मनी चुक गया था। अव कोई उसे वचा नहीं सकता था। अव सवाल सिर्फ समय का रह गया था।"

कुर्स्क की विजय के बहुत बड़े अंतर्राष्ट्रीय नतीजे हुए। द्वितीय विश्वयुद्ध की वाद की पूरी की पूरी दिशा पर उसका निर्णायक प्रभाव पड़ा और उसने यूरोप में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष का जोरदार वढ़ावा दिया।

राष्ट्रपति रूज़वेल्ट ने 6 अगस्त को जोसेफ़ स्तालिन को लिखा : "सोवियत संघ वखूबी अपनी उपलब्धियों पर गर्व कर सकता है।" 12 अगस्त को ब्रिटिश प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल ने सोवियत शासनाध्यक्ष को एक बधाई संदेश भेजा, जिसमें उन्होंने लिखा : "इस मोर्चे पर जर्मन सेना की हर पराजय हमारी अंतिम विजय का एक-एक मील का पत्थर है।" ब्रिटिश पत्रकार अलेग्ज़ेंडर वर्थ ने इसी वात को और भी समीचीन ढंग से पेश करते हुए कहा कि कुर्स्क का संग्राम जीतकर रूस ने सारतः युद्ध जीत लिया है।

कुर्स्क के प्रत्याक्रमण ने वढ़कर सभी मोर्चों पर एक आम सोवियत आक्रमण अभियान का रूप ले लिया और नाज़ी नेतृत्व अव पूर्व में नयी जीतें हासिल करने के वजाय यह सोचने लगा कि सोवियत सेना के आगे बढ़ने के वेग को कैसे रोका जाये।

अगस्त से अक्तूबर 1943 के बीच कालिनिन और पश्चिमी मोर्चों के सैनिक 400 किलोमीटर पश्चिम वढ़ गये और उन्होंने स्मोलेंस्क क्षेत्र को आजाद करा

लिया और वे ब्येलोरूस जा धमके जिसके पूर्वी क्षेत्रों से हमलावरों का शीघ्र सफाया कर दिया गया। सोवियत भूभाग में गठित प्रथम पोलिश कोश्चिउस्को डिवीजन वहां सोवियत सैनिकों के साथ कंधे से कंधा मिला कर लड़ा।

13 अगस्त 1943 को दक्षिण में एक बड़े सोवियत हमले की शुरूआत हो गयी। 40 दिनों की इस लड़ाई में नाज़ी सैनिक 300 किलोमीटर से भी ज्यादा पश्चिम ठेल दिये गये और पूरे के पूरे दोनवास को और उक्रेन के एक बड़े हिस्से को आजाद कर लिया गया।

सितंबर के उत्तरार्ध में सोवियत सेना एक 700 किलोमीटर के मोर्चे पर आगे बढ़ते हुए दि्नएपर के बायें तट पर पहुंच गयी। दि्नएपर का संग्राम युद्ध के इतिहास के सबसे ज्वलंत पृष्ठों में एक है। कई दिनों के घनघोर संग्राम के बाद दि्नएपर जैसे जलावरोध को, जिस पर शत्रु के विशाल सैन्यबल का आधिपत्य था, सत्वर तोड़कर आगे निकल जाना एक अत्यंत विषम कार्य था, किन्तु सोवियत सैनिकों ने इसे शानदार ढंग से संपन्न किया। नाज़ियों का एक और 'अभेद्य प्राचीर' ढह गया। राष्ट्रीय पर्व—महान अक्तूबर समाजवादी क्रांति की 26वीं जयंती—के ठीक पहले हमलावर उक्रेन की राजधानी किएव से खदेड़ बाहर किये। उसके बाद दुश्मन को उक्रेन से दि्नएपर के पश्चिम हांकने का कार्य शुरू हो गया।

सोवियत सेना का ग्रीष्म और शरद अभियान 1943 में लगभग पांच महीने जारी रहा। वह 300 से 600 किलोमीटर तक आगे बढ़ी और उसने रूसी संघ, उक्रेन और ब्येलोरूस के अत्यंत महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों को मुक्त कर लिया और दुश्मन के 118 डिवीज़नों के पांव उखाड़ दिये। अकेले नाज़ियों के स्थल सैनिकों में हताहतों की संख्या दस लाख से ऊपर पहुंच गयी और उन्होंने लगभग 3,200 टैंक और लगभग 10,000 विमान गंवा दिये। इससे वे अप्रैल और दिसंबर के बीच कोई 40 डिवीज़न पश्चिम से पूर्वी मोर्चे पर स्थानांतरित करने को बाध्य हो गये।

दुश्मन एक के बाद दूसरी मुंहतोड़ पराजय झेलता गया और उसका नतीजा यह हुआ कि फासिस्ट गुट छिन्न-भिन्न हो गया। सितंबर 1943 में इटली उससे बाहर हो गया। नाज़ी जर्मनी तथा रोमानिया, हंगेरी और फ़िनलैंड के बीच संबंधों में तनाव पैदा हो गया। इसके ठीक विपरीत सोवियत संघ की प्रतिष्ठा बढ़ गयी। उसके साथ सारी दुनिया के प्रगतिशील लोगों की सहानुभूति और नैतिक समर्थन था। नाज़ी-आधिकृत देशों में राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष तेज होने लगा था।

दुश्मन को खदेड़ने का सिलसिला

"जो हमारे पास तलवार लेकर आयेगा, वह तलवार से मारा जायेगा। रूसी धरती इसका कायल रही है और कायल रहेगी।"

—अलेक्सांदर नेव्स्की[1]

1943 के वर्ष में हरावल मोर्चे की कार्रवाइयों तथा चन्दावल के युद्ध-प्रयासों, दोनों ही मामलों में एक नया मोड़ आया। सोवियत संघ का प्रतिरक्षा उद्योग अब पूरे ज़ोर-शोर से कार्य करने लगा था और उस वर्ष उसने मोर्चे को 24,000 से अधिक टैंकों और स्वचालित गनों, लगभग 35,000 विमानों और बड़े परिमाण में अन्य उपकरणों की सप्लाई की। सोवियत सेना की योधन-क्षमता में अपार वृद्धि हो गयी थी और उसमें मास-प्रतिमास वृद्धि होती जा रही थी। 1944 के आरम्भ होने तक सोवियत सेना जनबल में दुश्मन से 30 प्रतिशत अधिक समर्थ, तोपखाने में 60 प्रतिशत तथा विमानों में 500 प्रतिशत से भी अधिक समर्थ हो गयी थी। और सोवियत सैनिकों की नैतिक श्रेष्ठता दुश्मन की तुलना में अपरिमेय थी, क्योंकि दुश्मन की लड़ाकू भावना क्षीण हो चुकी थी। इसके अलावा सोवियत सैन्यबल ने बड़े पैमाने की सामरिक कार्रवाइयों की योजना बनाने और उन्हें अमल में उतारने का अपार अनुभव जोड़ लिया था। सोवियत-जर्मन मोर्चे पर हालात आमूल बदल चुके थे।

किन्तु दुश्मन अभी भी बलवान था। उसके पास कुल 49,00,000 अधिकारियों और सैनिकों के 248 डिवीज़न थे। वह किसी हमले की बड़े पैमाने की कार्रवाई की योजना बना पाने में अक्षम था, किन्तु हर जगह वह जान पर खेलकर सोवियत सैनिकों का प्रतिरोध करता रहा। नाज़ियों ने अब हिटलर-विरोधी

1. अलेक्सांदर नेवस्की (लगभग 1220-63) एक रूसी राजनेता और सैनिक नेता थे जिसने रूस के पश्चिमोत्तर भूभागों का स्वेडिश और जर्मन सामंतों द्वारा हड़पे जाने से बचाने वाली रूसी सेना का नेतृत्व किया था।

संश्रय को कमजोर करने के लिए राजनीतिक कुचक्र रचने और सोवियत संघ के पश्चिमी मित्रों के साथ गुप्त सौदे पटाने की कार्रवाइयों पर बड़ी आशाएं टिका रखी थीं।

किन्तु सोवियत सर्वोच्च कमान ने उन मंसूबों को नाकाम कर दिया। सोवियत सेना के सामने अब यह ज़िम्मा आ पड़ा था कि वह दुश्मन की सेनाओं को बिना कोई मोहलत दिये पूरे के पूरे मोर्चे पर पीछे हांकती जाये, उन पर बिना रुके वार पर वार करती जाये और नाज़ी दैत्य का उसी की मांद में काम तमाम कर दे। सोवियत सेना ने यह ज़िम्मा ससम्मान निभाया।

आइए, हम उन मुख्य सैनिक घटनाओं को संक्षेप में स्मरण कर लें जिनके साथ 1944 में सोवियत भूमिभाग की मुक्ति परिपूर्ण हुई थी।

14 जनवरी को लेनिनग्राद और वोल्खोव मोर्चों ने बाल्टिक नौसैनिक बेड़े के सक्रिय संबल के साथ लेनिनग्राद में हमले की कार्रवाई शुरू की और विशाल नाज़ी सैन्य-समूह नॉर्थ को परास्त कर दिया।

जनवरी, फरवरी और मार्च में द्निएपर के पश्चिम उक्रेन में पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे उक्रेनी मोर्चों ने बहुत ही बड़े आक्रमण की कार्रवाइयां चलायीं। इन मोर्चों के पास जनबल और युद्ध-सामग्रियों की विपुलता थी। फलतः उन्होंने चोटें तुर्त-फुर्त और चकनाचूर कर देने वाली थीं। मसलन, कोर्सुन-शेवचेंकोव्स्की में उन्होंने दुश्मन के दस डिवीज़नों और एक ब्रिगेड को घेर लिया और साफ कर डाला। हमलावरों को द्निएपर के पश्चिम पूरे उक्रेन से और मोल्दाविया के एक हिस्से से खदेड़ भगाया गया। 26 मार्च को सोवियत सैनिक रोमानिया की सरहद पर जा पहुंचे।

अप्रैल और मई में चौथे क्रीमियाई मोर्चे, पृथक समुद्री स्थल सेना, काला सागर बेड़े और अज़ोव बेड़े ने क्रीमिया में दुश्मन की प्रतिरक्षा पंक्ति को तोड़ डाला और उस प्रायद्वीप से हमलावरों का सफाया कर दिया। सेवास्तोपोल जाने वाले मार्गों पर लड़ाई खास तौर पर विकट रही। फिर भी सेवास्तोपोल को पांच दिनों में आजाद करा लिया गया, जबकि नाज़ियों को 1941-42 में उस शहर पर कब्ज़ा करने में 250 दिन लगे थे।

सोवियत सेना की सफलताओं से यह सिद्ध हो गया कि वह नाज़ी जर्मनी को अकेले अपने बूते परास्त करने में सक्षम थी। यह देख पश्चिमी मित्रराष्ट्र दूसरा मोर्चा खोलने के लिए चटपट दौड़ पड़े। 6 जून 1944 को आंग्ल-अमरीकी सेना उत्तरी फ्रांस में उतरी। सोवियत मोर्चे को यह सहायता देर से अवश्य मिली थी, फिर भी निश्चय ही महत्त्वपूर्ण थी, किन्तु युद्ध का प्रधान और निर्णायक मोर्चा सोवियत मोर्चा ही रहा।

1944 की सबसे बड़ी कार्रवाइयों में एक थी ब्येलोरूसी कार्रवाई बाग्रा–

त्योन। इसमें प्रथम वल्टिक मोर्चे और पहले, दूसरे और तीसरे ब्येलोरूसी मोर्चे, इन चार मोर्चों ने रणनीतिक वायुसेना की विशाल इकाइयों और द्निएपर नौ-सैनिक वेड़े ने भाग लिया था।

यह आक्रमण 23 जून को शुरू किया गया था तथा 1,000 किलोमीटर के मोर्चे पर और 600 किलोमीटर गहराई तक संचालित किया गया था। सोवियत सैन्यवल 24,00,000 का था, जो 36,000 से अधिक गनों और मोर्टारों, 5,000 से अधिक टैंकों और स्वचालित गनों तथा 5,000 से अधिक विमानों से सुसज्जित था। उसका मुकावला 12,00,000 दुश्मन सैनिकों से था जो खुद भी बड़े परि-माण में सामरिक साज-सामान से लैस थे।

सोवियत सेनाओं ने कई प्रचण्ड प्रहार किये और 500 किलोमीटर के मोर्चे पर नाज़ी पांतों को तोड़ डाला और पहले छह दिनों में वह 150 किलोमीटर आगे वढ़ गयी। वितेब्स्क और वोव्रुइस्क में दस नाज़ी डिवीज़नों को घेर लिया गया और उखाड़ दिया गया तथा मिंस्क के पूर्व में शत्रु के 1,00,000 सैनिकों के सैन्यवल को घेर कर नष्ट कर दिया गया।

जुलाई के समाप्त होते-होते पूरे ब्येलोरूस से नाज़ी सैनिकों का सफाया कर दिया गया तथा लिथुआनिया और लात्विया को मुक्त करने का कार्य शुरू कर दिया गया। 17 अगस्त 1944 को सोवियत लेना नीमेन नदी के दक्षिण में जर्मन सीमा पर पहुंच गयी। पोलैंड को मुक्त करने का कार्य इससे भी पहले शुरू हो चुका था। 23 जुलाई को सोवियत सेना ने हमलावरों को ल्युब्लिन से खदेड़ बाहर किया था और अगस्त के शुरू होते ही वारसा के दक्षिण विस्त्यूला के पश्चिमी तट पर हमले के महत्त्वपूर्ण अड्डों पर कब्ज़ा कर लिया था। वाग्रात्योन कार्रवाई सफलतापूर्वक पूरी कर ली गयी। नाज़ी सैन्य-समुच्चय सेंटर को कुचल डाला गया और मोर्चा पंक्ति कोई 600 किलोमीटर पश्चिम ठेल दी गयी।

जुलाई 1944 में कारेलिया में दुश्मन के प्रतिरोध को तोड़ दिया गया तथा लेनिनग्राद के लिए उत्तर से खतरा समाप्त कर दिया गया। सितम्बर में फ़िन-लैंड ने जर्मनी से नाता तोड़ लिया और वह युद्ध से वाहर हो गया।

आक्रांता अभी एक आघात से उबर नहीं पाते थे कि दूसरा तथा और भी जोरदार आघात कर दिया जाता था। जिस समय ब्येलोरूसी कार्रवाई पूरे जोर-शोर पर चल रही थी, उसी समय पश्चिमी उक्रेन में हमला शुरू कर दिया गया। प्रथम उक्रेनी मोर्चे के सैनिकों ने दुश्मन के सैन्य-समुच्चय नार्थ उक्रेन को नष्ट कर डाला और दो हफ्ते की हमला कार्रवाइयों में वे ल्वोव सम्पूर्ण पश्चिमी उक्रेन और दक्षिण-पूर्वी पोलैंड मुक्त करते हुए तथा सांदोमिएर्ज़ क्षेत्र में हमले के एक विशाल अड्डे पर कब्ज़ा करते हुए 200 किलोमीटर से भी ज्यादा आगे तक बढ़ते गये।

लिथुआनिया, लात्विया और एस्तोनिया के सोवियत वाल्टिक जनतंत्रों को मुक्त करने के लिए विकट संग्राम अभी भी जारी था। वह शुरू तो जुलाई में ही हो गया था, लेकिन सचमुच वड़ा रूप उसने सितम्बर में लिया था। उसमें पहले, दूसरे और तीसरे वाल्टिक मोर्चों, तीसरे ब्येलोरूसी मोर्चे, लेनिनग्राद मोर्चे और बाल्टिक वेड़े की इकाइयां भाग ले रही थीं।

तालिन, रीगा, काउनास और विल्निउस नगरों को मुक्त करने के बाद मध्य अक्तूबर तक सोवियत सैनिकों ने नाज़ी हमलावरों को कूरलैंड स्पिट के अलावा लगभग पूरे वाल्टिक प्रदेश से खदेड़ वाहर किया था। कूरलैंड में दुश्मन अभी भी प्रतिरोध कर रहा था, हालांकि उसके सारे स्थलीय रास्ते कट चुके थे।

वाल्टिक प्रदेश को मुक्त करने के साथ सोवियत सैनिक पूर्वी प्रशा की सीमाओं पर पहुंच गये। युद्ध अब आक्रांता की ओर खिसकता आ रहा था।

जो सोवियत भूक्षेत्र सबसे अन्त में मुक्त किया गया, वह उत्तरी ध्रुव वृत्त के अन्दर पड़ता था। अक्तूबर 1944 में कारेलियाई मोर्चे के सैन्यवल ने उत्तरी वेड़े के पोतों और इकाइयों के सहयोग से दुश्मन के 20वीं पर्वतीय सेना को परास्त कर दिया, पेत्सामो (पेचेंगा) बन्दरगाह और सोवियत संघ के उत्तरी हिस्से के समस्त नाज़ी-अधिकृत क्षेत्रों को मुक्त कर लिया तथा नार्वे में प्रवेश कर उसने नाज़ी आधिपत्य से उसको मुक्त करने की कार्रवाई शुरू कर दी।

विदेशी धरती पर मुक्ति-अभियान

"…हम जानते हैं कि वीर सोवियत जनता नाज़ी जर्मनी की पराजय के लिए सारी दुनिया के जनगण के धन्यवाद की पात्र है, किंतु हमारी मातृभूमि और अन्य देश तो अपनी आजादी के लिए उनके आभारी हैं।"

—लुदविग स्वोबोदा

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान करोड़ों पोल, चेक, स्लोवाक, सर्ब, क्रोशियन, फ्रांसीसी, बेल्जियन, ग्रीक, डेन, नार्वेजियन और अन्य कौमियतों के लोग नाज़ी विजेताओं के पांवों तले कुचल दिये गये थे। बुल्गारिया, हंगेरी, रुमानिया और फ़िनलैंड के जनगण को उनके फासिस्ट-समर्थक शासकों ने हिटलर के आदेश पर युद्ध में ला फंसाया था और उन्हें भी उत्पीड़न का शिकार होना पड़ा था। उधर जापानी सैन्यवादियों ने चीन के एक बड़े भाग, कोरिया, फिलिपीन्स, इंडोचीन, इंडोनेसिया पर कब्ज़ा कर लिया था और प्रशांत महासागर के अन्य देशों के दसियों लाख नागरिकों को गुलाम बना लिया था। जर्मनी, इटली और जापान के मेहनतकश भी स्वतंत्र नहीं रह गये थे। फासिस्ट प्रचार के झांसे में आकर वे भी निरर्थक कुर्बानियां देने को बाध्य कर दिये गये थे।

आक्रांताओं ने जिन देशों को जीता था, वहां उन्होंने आतंक, हिंसा, शोषण और जनगण की राष्ट्रीय भावनाओं के अनादर-उपहास का शासन कायम कर दिया था। उन्होंने पूरे यूरोप में यातना-शिविरों का जाल बिछा दिया था और उन्हें हैवानी मौत के कारखानों में बदल दिया था। दाचाउ, आशविट्ज़, मेडानेक, बुकेनलैंड, साश्शेनहासेन आदि जैसे भयावह स्थानों के नामोल्लेख मात्र से रोंगटे खड़े हो जाते हैं। ये वे ठिकाने हैं जहां दसियों लाखों लोगों को, जिनमें बहुतेरे सोवियत नागरिक थे, मौत के घाट उतारा गया था।

गुलाम देशों के जनगण ने विदेशी उत्पीड़न को अंगीकार नहीं किया। वे

मुक्ति के लिए संघर्ष में उमड़ पड़े। प्रतिरोध दलों, छापामार दस्तों और सेनाओं और भूमिगत फासिस्ट संगठनों ने लाखों लोगों को एक सूत्र में बांधकर आधिपत्यकारी सैनिकों को काफी क्षतियां पहुंचायीं और उनके लिए चैन से रह पाना मुश्किल कर दिया और उन्हें काफी बड़ा सैन्यबल अपने चंदावल की रक्षा करने के लिए तैनात रखने को मजबूर कर दिया। युगोस्लाविया और पोलैंड में सशस्त्र प्रतिरोध खास तौर पर बड़े पैमाने पर संगठित किया गया। कारण यह है कि सोवियत जनता की ही भांति वहां की जनता को भी युद्धकालीन वर्षों में काफी क्षति उठानी पड़ी थी—पोलैंड में 60 लाख जानें गयी थीं और युगोस्लाविया में 17,00,000।

यूरोप के नाज़ी-अधिकृत देशों की मुक्ति में निर्णायक भूमिका सोवियत जनता द्वारा तीन वर्ष से अधिक समय तक स्वदेश में नाज़ी गिरोहों के खिलाफ़ और बाद में विदेशी धरती पर चलाये गये सशस्त्र संघर्ष ने अदा की थी।

नाज़ी जर्मनी द्वारा सोवियत संघ पर हमले के बाद शुरू के दिनों से ही विश्व के जनगण यह समझने लगे कि सोवियत सेना ही वह शक्ति है जो नाज़ी आक्रांताओं को चकनाचूर कर सकती है और अधिकृत देशों को मुक्त कर सकती है। उधर सोवियत सैनिक अन्य जनगण को विदेशी आततायियों से लड़ने में मदद करना अपना प्रथम कर्तव्य समझते थे। 1944 और 1945 में सोवियत संघ की सशस्त्र सेना ने पहले यूरोप के और फिर एशिया के जनगण को मुक्त करने के उद्देश्य से कई रणनीतिक कार्रवाइयां कीं। इन कार्रवाइयों में 11 मोर्चे, दो हवाई प्रतिरक्षा मोर्चे, चार नौसैनिक बेड़े, 50 तमाम हथियारों की, छह टैंकों की और 13 हवाई सेनाएं, तीन हवाई प्रतिरक्षा सेनाएं और दो बेड़े शामिल थे जिनका कुल संयुक्त बल लगभग 70,00,000 सैनिकों का था। उन्होंने कुल 18 करोड़ से अधिक आबादी के दस यूरोपीय और दो एशियाई देशों को पूर्णतः या अंशतः मुक्त किया। इन कार्रवाइयों में सोवियत सेना के कुल हताहतों की संख्या 30 लाख से ऊपर थी। उनमें से 10 लाख से अधिक लोग मारे गये थे।

युद्ध के अंतिम वर्ष की रणनीतिक कार्रवाइयां यूरोप के जनगण की मुक्ति के लिए निर्णायक महत्त्व की थीं। उनमें जासी-किशिनेव (अगस्त 1944), बेलग्राद (अक्तूबर 1944), विस्त्यूला-ओडर (जनवरी-फरवरी 1945), पूर्वी प्रशा (जनवरी-अप्रैल 1945), बुदापेस्त, बालातोन और वियाना (अक्तूबर 1944-अप्रैल 1945) तथा बेर्लिन और प्राग (अप्रैल-मई 1945) की सैनिक कार्रवाइयां शामिल थीं।

सोवियत जनता इन यूरोपीय देशों में प्रतिरोध की आंतरिक शक्तियों द्वारा चलाये गये संघर्ष के तथा जन-मुक्ति सेनाओं, छापामार दस्तों और फासिस्ट-विरोधी समूहों की सामरिक सफलताओं और शौर्य के महत्त्व को यथोचित अंगी-

कार करती है।

युद्ध के अंतिम चरण में रोमानिया और बुल्गारिया के जनगण ने नयी सरकारें गठित कर ली थीं और जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी थी। उसके बाद वहां के अनेक डिवीज़न सोवियत सैनिकों के साथ-साथ लड़े थे। दो पोलिश सेनाओं और कई अलग-अलग पोलिश दस्तों ने पोलैंड को मुक्त कराने में और जर्मन भूक्षेत्र पर युद्ध में भाग लिया। एक चेकोस्लोवाक पदातिक सैन्यबल ने अन्य चेक और स्लोवाक इकाइयों के साथ-साथ मिलकर तथा एक हंगेरियाई स्वयंसेवक रेजिमेंट ने अपनी-अपनी मातृभूमियों को आजाद कराने में सोवियत सेना के साथ कंधे से कंधा मिलाकर युद्ध किया था।

नाज़ी आक्रांताओं के विरुद्ध संघर्ष में युगोस्लाव जनता और उसकी मुक्तिसेना ने जिसमें लगभग 4,00,000 सैनिक थे, बहुत बड़ा योगदान किया था। 1944 के शरद से सोवियत और युगोस्लाव सेनाएं आम दुश्मन के विरुद्ध गहरे सहयोग के साथ लड़ाई लड़ी थीं। युगोस्लाव राजधानी बेलग्राद सोवियत और युगोस्लाव सैनिकों के संयुक्त प्रयास से 20 अक्तूबर 1944 को मुक्त की गयी।

योसिप ब्रॉज़ टीटो ने कहा था "हमारे जनगण सोवियत संघ और उसकी गौरवशाली सेना द्वारा किये गये योगदान की अत्यधिक सराहना करते हैं। उन्होंने ही युद्ध के नाज़ुक वर्षों में मुख्य प्रहार झेला था तथा फासिज़्म की काली ताकतों को पराजित करने में निर्णायक भूमिका अदा की थी।"

सोवियत संघ ने पोलैंड, रोमानिया, बुल्गारिया, चेकोस्लोवाकिया, युगोस्लाविया और कुछ अन्य देशों को उनकी जन सेनाओं की खातिर बड़े परिमाण में शस्त्रास्त्र और साजसामान प्रदान किये थे और उन देशों की सशस्त्र सेनाओं के विकास में उन्हें अन्य प्रकार की सहायता भी दी थी।

सोवियत जनता और सैनिकों तथा यूरोप के मुक्त देशों के जनगण और उनकी सेनाओं की मैत्री पर हिटलरी जर्मनी और उसके दुमछल्लों के विरुद्ध संयुक्त संग्रामों में प्रचुरता से बहाये गये रक्त की मुहर लगी हुई है।

ये यूरोपीय जनगण सोवियत जनता के साहस और शौर्य की अत्यधिक प्रशंसा करते थे। इसने उन्हें अपनी आजादी प्राप्त करने में मदद पहुंचायी थी। उन्होंने अपने मुक्तिदाताओं के सम्मान में अनेक स्मारक निर्मित किये। ऐसे स्मारक सोफिया, बुखारेस्त, प्राग, वियना, बुदापेस्त, वारसा, बेलग्राद, नार्विक में और अन्य स्थानों पर देखे जा सकते हैं।

हजारों सोवियत जन प्रतिरोध आंदोलन की पांतों में, छापामार दस्तों में, तथा फ्रांस, इटली, युगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड और अन्य यूरोपीय देशों के भूमिगत फासिस्ट-विरोधी समूहों की पांतों में फासिज़्म के खिलाफ़ लड़े।

फ्रेंच देशभक्तों से गठित नार्मंदी-नीमेन वायुसैनिक रेजिमेंट के पराक्रम के करतबों सोवियत और फ्रेंच जनता की घनिष्ठ जुझारू मैत्री का एक ज्वलंत उदाहरण पेश करते हैं। इस रेजिमेंट के पायलटों को दिये गये अनेकानेक सोवियत सामरिक अलंकरण उनकी सेवाओं के उच्च आकलन के प्रमाण हैं।

1945 के शिशिर और वसंत में सोवियत सेना द्वारा हासिल की गयी सफलताओं के परिणामस्वरूप मोर्चापंक्ति खिसककर बहुत दूर पश्चिम में—मध्य यूरोप में—पहुंच गयी थी। सोवियत सैनिकों ने बर्लिन पर तूफानी चढ़ाई बोल देने को उद्यत होकर ओडर नदी के किनारे धावे की मोर्चेबंदियां कर लीं।

हालांकि नाज़ी जर्मनी के लिए स्थिति निराशापूर्ण हो चुकी थी, फिर भी उसके नेताओं ने अपने साम्राज्य के पतन के ठीक पहले काफी बड़ा सैन्यबल जोड़ रखा था। मसलन, 15 अप्रैल 1945 तक पूर्वी मोर्चे पर 214 जर्मन डिवीज़न (जिनमें 34 बख्तरबंद और 15 मोटरचालित डिवीज़न शामिल थे) तथा 14 ब्रिग्रेड जमा हो चुके थे।

दुश्मन का प्रतिरोध खास तौर पर बर्लिन क्षेत्र में प्रबल था। वहां 10,000 से अधिक गनों और मोर्टारों, 1,500 टैंकों और धावा गनों तथा 3,3000 विमानों के साथ लगभग दस लाख सैनिकों का जमाव भी रखा गया था। नाज़ियों ने ओडर और बर्लिन के बीच नगरों और गांवों के घने तानेबाने को आधार बना कर पत्थर की दीवालों और अनगिनत नहरों और झीलों की मदद से अनेक किलेबंद क्षेत्र बना रखे थे। स्वयं बर्लिन को बड़ी संख्या में तोपों के पुनर्बलित कंक्रीट के ठिकानों की मदद से एक शक्तिशाली दुर्ग में बदल दिया गया था। आखिरी संपूर्ण लामबंदी में बूढ़े और बच्चे सम्मिलित थे जिनसे वोक्सटर्म दस्ते गठित किये गये थे। टैंकभंजक टोलियां कायम की गयी थीं जिनका सचालन नाज़ी तरुण संगठन हिटलरजुगेंड के सदस्य कर रहे थे। बर्लिन के गैरिसन में 2,00,000 से अधिक सैनिक थे।

सोवियत सेना का जबर्दस्त प्रतिरोध कर के नाज़ी नेता कुछ समय पा लेने और अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन के प्रतिक्रियावादी हलक़ों के साथ एक गुप्त सौदा पटा लेने की कोशिश कर रहे थे। वे आशा कर रहे थे कि उन्हें हिटलर-विरोधी संयुक्त मोर्चे को विभक्त करने और पश्चिम के साम्राज्यवादियों के साथ मिलकर सोवियत संघ के विरुद्ध चढ़ाई बोल देने में सफलता मिल जायेगी। यही कारण था कि नाज़ी कमान ने वस्तुतः पश्चिमी मोर्चे पर प्रतिरोध बंद कर दिया और उन डिवीज़नों को, जो लड़ाई के लिए अपेक्षाकृत अधिक उपयुक्त थे, चटपट पूर्व की ओर भेज दिया।

ओडर पर जर्मन प्रतिरक्षा को तोड़ना और बर्लिन पर कब्ज़ा करना बहुत ही मुश्किल काम था, किंतु साथ ही वह अपार सैनिक और राजनीतिक महत्त्व

का भी था। प्रथम और द्वितीय ब्येलोरूसी और प्रथम उक्रेनी, इन तीन मोर्चों को यह कार्य पूरा करने का दायित्व सौंपा गया। साथ ही इसमें प्रथम और द्वितीय पोलिश सेनाओं ने भी भाग लिया। तीनों सोवियत मोर्चों के पास 25,00,000 सैनिक, लगभग 42,000 गनें और मोर्टार, 6,250 टैंक और स्वचालित गनें तथा 7,500 विमान थे।

बर्लिन अभियान की योजना इस प्रकार थी कि दुश्मन की प्रतिरक्षा में प्रविष्ट होने के लिए एक साथ जबर्दस्त प्रहार किये जायें, दुश्मन की जमातबंदी पर घेरा डाल लिया जाये, उसे अनेक हिस्सों में विभाजित कर दिया जाये और एक-एक हिस्से को नष्ट किया जाये। सोवियत सैनिक बर्लिन पर कब्ज़ा कर लेने के बाद एल्ब नदी तक बढ़ने और मित्र सेनाओं से जा मिलने तथा नाज़ी जर्मनी की पराजय को पूर्णता तक पहुंचा देने वाले थे।

इस अभियान को सफल बनाने में दूसरे, तीसरे और चौथे उक्रेनी मोर्चों के हमलों से मदद मिलनी थी। वे चेकोस्लोवाकिया को मुक्त कराने का स्वतंत्र कार्य संपन्न कर रहे थे। ऐसा करके उन्होंने जर्मन कमान को चेकोस्लोवाकिया की अपनी सेना का इस्तेमाल बर्लिन क्षेत्र में कुमक पहुंचाने के लिए करने से रोक लिया।

सोवियत सैनिक अन्तिम संग्रामों के लिए असाधारण उमंग के साथ तैयारी कर रहे थे।

16 अप्रैल 1945 को सूरज की पहली किरण फूटने के साथ हजारों गनों और मोर्टारों ने ओडर के उस पार दुश्मन की प्रतिरक्षा के खिलाफ आग का प्रभंजन झोंक दिया। वायुसेना से संवलित टैंक और पदातिक हमला करने के लिए झपट पड़े। नाज़ियों ने सर्वत्र दृढ़तापूर्वक प्रतिरोध किया, किन्तु प्रबल अग्रगति को रोक पाने में वे असफल हुए।

21 अप्रैल को सोवियत सैन्यबल बर्लिन के प्रतिवेश में पहुंच गया। प्रथम ब्येलोरूसी मोर्चे की इकाइयां उसके पूर्वोत्तरी उपनगरीय अंचल में घुस पड़ीं और अगले दिन प्रथम उक्रेनी मोर्चे की इकाइयां नगर के दक्षिण-पूर्व में घुस पड़ीं। 24 अप्रैल को इन मोर्चों की सेनाएं बर्लिन के दक्षिण-पूर्वी छोर पर आ मिलीं और इस प्रकार दुश्मन के सैन्यबल को उन्होंने दो भागों में विभक्त कर दिया। जर्मन राजधानी के दक्षिण-पूर्व के जंगलों में 2,00,000 से अधिक जर्मन सैनिक घेर लिये गये और बर्लिन से अलग-थलग कर दिये गये। एक दिन बाद सोवियत सेनाओं ने बर्लिन के पश्चिम में केट्ज़िन क्षेत्र में भी घेराबन्दी पूरी कर ली। हिटलरपंथी दोहरे फांस में फंस गये। उसे तोड़कर बाहर आ जाने की उनकी बदहवास कोशिशें व्यर्थ हुईं। एक हफ्ते की और अधिक विकट लड़ाई के बाद दुश्मन की घिरी हुई जमातबन्दी के टूट-टूटकर अलग-थलग और अकेले जा पड़े

टुकड़े नष्ट कर डाले गये।

25 अप्रैल को एक और महत्त्वपूर्ण घटना घटी : पांचवीं रक्षी सेना की अग्रिम इकाइयां एल्व नदी पर तोर्गाउ क्षेत्र में प्रथम अमरीकी सेना के गश्ती दस्तों से आ मिलीं। उसके शीघ्र ही वाद सोवियत मोर्चों की अन्य इकाइयां एल्व पहुंच गयीं।

वर्लिन में घिरी दुश्मन की विशाल जमातवंदी ने अपना सफाया किये जाने के अभियान के दौरान सोवियत सैनिकों का वेहद भयंकर प्रतिरोध किया, किन्तु सोवियत सैनिक एक-एक इंच पर लड़कर आगे वढ़ते हुए उत्तरोत्तर नगर के केन्द्र के निकट पहुंचते गये। उन्होंने राइखस्टाग के रास्तों पर कब्ज़ा कर लिया और 30 अप्रैल की सुवह उस विशाल भवन पर चढ़ाई शुरू कर दी। राइखस्टाग की रक्षा करनेवाले चुनिन्दा जर्मन दस्तों ने विकट प्रतिरोध किया। तीसरे पहर जाकर कुछ धावा दल भवन में घुस पाये। रात 9·50 वजे सार्जेंट मिखाइल येगोरोव और सार्जेंट मेलितोन कांतारिया ने राइखस्टाग पर विजय-ध्वज फहरा दिया।

वर्लिन गैरिसन के दिन अव गिने-चुने रह गये थे। किन्तु लड़ाई नयी तेजी के साथ छिड़ गयी और कहीं 2 मई को जाकर वर्लिन गैरिसन की कमान ने रेडियो पर आत्मसमर्पण के लिए अपनी रज़ामन्दी का ऐलान किया। दुश्मन ने हथियार डाल दिये। वर्लिन का पतन हो गया।

वर्लिन अभियान के दौरान दुश्मन के 93 डिवीज़न चकनाचूर कर डाले गये जिनमें 23 वख्तरवन्द और मोटरचालित डिवीज़न शामिल थे, और 11 ब्रिगेडों, 4,80,000 सैनिकों, 1,550 टैंकों, 11,000 गनों और मोर्टारों और 4,510 विमानों को कब्ज़े में लिया गया।

नाज़ी जर्मनी ने पराजय मान ली।

वर्लिन के आत्मसमर्पण के वाद के आरम्भिक दिनों को याद करते हुए जेनरल वासिली शातिलोव, जिनके डिवीज़न ने राइखस्टाम पर विजय-ध्वज फहराया था, लिखते हैं : "वर्लिनवासी हमारे लोगों को अधिकाधिक गौर से देखते थे। हां, उनकी दृष्टि में तरह-तरह की भावनाएं व्यक्त होती थीं : विनम्रता, अनुग्रह, अधछिपी घृणा। लेकिन ज्यादातर हम उनकी आंखों में सच्चे अचरज के भाव देखते थे। लोगों का दृष्टिकोण लगातार चलने वाले फासिस्ट प्रचार द्वारा ढाला गया था, जिससे उन्हें विजेताओं का आचरण समझ में नहीं आ रहा था। रूसियों ने हत्या और लूटपाट नहीं शुरू की; उन्होंने सोवियत भूभाग में जर्मन सेना द्वारा की गयी नृशंसताओं का प्रतिशोध नहीं लिया। उल्टे, प्रकटत: जिनको उन्हें अपना घोर शत्रु मानना चाहिए था, उनके खाने की व्यवस्था की।"

सोवियत सैनिकों को अन्तर्राष्ट्रीयतावाद की भावना में दीक्षित किया गया था और पराजित देश की आवादी के प्रति मानवीयता दिखाने का प्रशिक्षण दिया

गया था। अतः उन्होंने वर्लिन संग्राम के दौरान नागरिक आवादी की सुरक्षा के प्रति चिन्ता प्रकट की। सोवियत अधिकारी और सैनिक अक्सर ही खुद अपनी जान जोखिम में डालकर स्त्रियों, वच्चों और बूढ़ों की रक्षा करते रहे। वे अपने हिस्से का आहार और दवाएं उन्हें दे देते रहे। सोवियत कमान ने वर्लिन और अन्य जर्मन नगरों की आवादी को खाद्य की सप्लाई करने, परिवहन सेवाओं, जल-आपूर्ति और विजली की वहाली करने तथा चिकित्सा सेवा संगठित करने में हर संभव सहायता पहुंचायी।

8 मई 1945 को वर्लिन के उपनगर कार्ल्सहोर्स्ट में जर्मन आला कमान के प्रतिनिधियों ने समस्त जर्मन सशस्त्र सेना के विना शर्त आत्मसमर्पण की दस्तावेज पर हस्ताक्षर कर दिये। मार्शल ज्यार्जी जुकोव ने उस ऐतिहासिक समारोह की अध्यक्षता की।

अन्ततः चिरप्रतीक्षित विजय दिवस का आगमन हुआ। 9 मई का दिन सोवियत संघ के तमाम नगरों, कस्वों और गांवों में अपार आनन्द का दिन था। उस दिन मास्को में शाम का झुटपुटा होने के वाद शानदार आतिशवाजी की गयी और तोपखाने द्वारा सलामी दी गयी। जोसेफ़ स्तालिन ने जनता के नाम कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार का संदेश जारी किया जिसमें कहा गया :

"हमने अपने देश की स्वतन्त्रता और स्वाधीनता के लिए जो महान कुर्वानियां दीं, युद्ध के दौरान हमारी जनता ने जो अकथ कठिनाइयां और क्लेश झेले, और मातृभूमि की खातिर मोर्चे पर और चंदावल में जो जीतोड़ प्रयास किये गये, वे सव निष्फल नहीं रहे हैं उन्हें शत्रु पर पूर्ण विजयश्री प्राप्त हो चुकी है।"

युद्ध के दौरान मुक्ति के अपने न्याय्य संघर्ष के जरिए एक सूत्र में वंधे राष्ट्रों का एक फासिस्ट-विरोधी संश्रय गठित हुआ था जो सक्रिय रूप में कार्य करता रहा। तीन महाशक्तियों—सोवियत संघ, अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन—का सैनिक संश्रय हिटलर-विरोधी गुट की वह धुरी था जिसमें युद्ध के वाद के दिनों में संघर्ष-रत फ्रांस और अन्य अनेक देश भी शामिल हो गये थे।

फ्रेंच, ब्रिटिश और अमरीकी जनता का तथा यूरोप के देशों के फासिस्ट-विरोधी प्रतिरोध आन्दोलन का आत्म-त्याग से भरा संघर्ष द्वितीय विश्वयुद्ध के इतिहास का एक उज्ज्वल अध्याय है। मित्रसेनाओं के अनेक सैनिक अभियानों ने फासिज़्म पर सवकी मिल-जुली जीत हासिल करने में महत्त्वपूर्ण योग दिया था। उन अभियानों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं : 1942 के शरद में अल अलामीन में ब्रिटिश हमले की कार्रवाई; 1943 के ग्रीष्म में आंग्ल-अमरीकी सेना द्वारा चलाया गया सिसिली का अभियान; दक्षिणी इटली में मित्रराष्ट्रों की सफल कार्रवाई जो सितम्बर 1943 में शुरू हुई; तथा अन्ततः जून 1944 में मित्रसेनाओं की नार्मंदी में उतरकर की गयी कार्रवाई, जो इन तमाम कार्रवाइयों में सवसे

महत्त्वपूर्ण थी। इसीके बाद अमरीकी, ब्रिटिश और फ्रेंच सेनाओं ने पश्चिमी यूरोप में सामरिक कार्रवाई शुरू की जिसकी परिसमाप्ति उनके एल्ब के तट पर पहुंचने और पूर्व से बढ़ी आ रही सोवियत सेना से आ मिलने के साथ हुई। अपने आम दुश्मन—फासिज्म—के खिलाफ राष्ट्रों के संघर्ष के ये सभी अविस्मरणीय मील के पत्थर थे।

यूरोप में आक्रमणकारिता के अधिष्ठान के समाप्त हो जाने के साथ एशिया में युद्ध की अग्निज्वालाओं को बुझाने का समय आ गया था। वहां पर आक्रांता और उत्पीड़क जापानी सैन्यवादी थे जिन्होंने चीन, कोरिया, इंडोचीन और अन्य अनेक एशियाई देशों की आबादी को गुलाम बना रखा था। उन्होंने सोवियत संघ के साथ किये गये तटस्थता के समझौते का नग्न उल्लंघन किया और सोवियत संघ के खिलाफ स्वयं अपने हमले का खतरा खड़ा कर और उसके मित्रों अमरीका और ब्रिटेन के खिलाफ युद्ध छेड़कर नाजी जर्मनी को सोवियत संघ के विरुद्ध उसके युद्ध में सक्रिय सहायता प्रदान की।

8 अगस्त 1945 को सोवियत संघ ने अपनी अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का सम्मान करते हुए तथा अपने सुदूर पूर्वी सीमांतों को सुरक्षित बनाने और एशिया के जनगण को जापानी प्रभुत्व से स्वयं को मुक्त करने में मदद करने के लिए जापान के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और उसके खिलाफ सामरिक कार्रवाइयां शुरू कर दीं।

ट्रांसबैकाल मोर्चे, प्रथम और द्वितीय सुदूर पूर्वी मोर्चों, प्रशांत बेड़े और आमूर बेड़े का कुल संयुक्त बल 45,00,000 से अधिक सैनिकों, 5,300 टैंकों और स्वचालित गनों, 5,200 विमानों और 26,000 गनों और मोर्टारों का था। मार्शल अलेक्सांदर वासीलेव्स्की सुदूर पूर्व के सोवियत सैन्यबल के प्रधान सेनापति थे। उस सैन्यबल ने मंगोलियाई लोकतन्त्र के सैनिकों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर युद्ध किया।

जापान की 12,00,000 बल की क्वांतुंग सेना पर, जिसने पूर्वोत्तरी चीन और कोरिया पर कब्ज़ा कर लिया था, कई प्रचंड प्रहार किये गये और चंद दिनों के भीतर ही उसके पांव उखड़ गये। यह पराजय ही वह मुख्य कारक था जिसने जापान को 2 सितम्बर 1945 को बिना शर्त आत्मसमर्पण की दस्तावेज पर हस्ताक्षर करने को बाध्य कर दिया।

अमरीका और ब्रिटेन की सशस्त्र सेनाओं ने जापान पर विजय प्राप्त करने में बड़ी भूमिका निभायी और चीन, मंगोलियाई लोक जनतन्त्र, कोरिया, इंडोचीन और अन्य एशियाई देशों के जनगण और राष्ट्रीय मुक्ति सेनाओं ने इस विजय में काफी बड़ा योगदान किया।

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति आक्रांताओं की पूर्ण पराजय के रूप में हुई।

विजय को सुनिश्चित बनाने वाले कारक

"युद्ध में विजय उस पक्ष की होती है जिसकी जनता के पास आरक्षित बल अधिक हो, शक्ति के स्रोत अधिक हों तथा दृढ़ता अधिक हो।"

—व्लादीमिर लेनिन

द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान और उसके बाद में भी अनेक विदेशी इतिहास-कार, सैनिक नेता और लेखक यही नहीं समझ पा रहे थे कि सोवियत संघ की जीतों को अमोघ बना देने वाली शक्ति का स्रोत कहां छिपा है।

बहुत-से ऐसे ईमानदार और वस्तुनिष्ठ अनुसंधानकर्ता भी हैं जो इस प्रश्न की सही-सही व्याख्या करते हैं। किंतु, आज दिन तक ऐसी पोथियां और संस्मरण प्रकाश में आते रहे हैं जो अज्ञानवश या जानबूझ कर सत्य को तोड़ते-मरोड़ते हैं और सोवियत जनता की विजय के महत्त्व को घटा कर आंकने और नाज़ी जर्मनी और उसके दुमछल्लों की पराजय के हेतुओं की भ्रामक व्याख्या पेश करने की कोशिश करते हैं। इनमें से कुछ लेखक—मसलन, भूतपूर्व नाज़ी जेनरल—यह सफाई देते हैं कि हिटलर ने उनकी सलाह पर अमल न कर गलतियां कीं और इसी से सोवियत संघ जीत गया। दूसरे यह दावा करते हैं कि रूस बेहद फैला हुआ देश है, उसकी जलवायु बहुत ही कठोर है और सड़कें बहुत खराब हैं, और इन्हीं सब ने मिलकर जर्मनी को पराजित कर दिया। और भी दूसरे हैं जो सोवियत संघ को उसके पश्चिमी मित्रराष्ट्रों द्वारा दी गयी इमदाद तथा युद्ध के गौण संग्राम-स्थलों की सैनिक कार्रवाइयों की भूमिका को हद से ज़्यादा बढ़ा-चढ़ा कर आंकते हैं। ऐसे लोग भी हैं जो सोवियत जनता की जीत को एक संयोग या दैव चमत्कार तक मानते हैं।

ऐसे दावों का खंडन करने की कोई जरूरत नहीं प्रतीत होती। आइए, हम यहां स्वयं को कुछ ऐसे तथ्यों का विवरण देने तक सीमित रखें जो वस्तुनिष्ठ पाठक को यह महसूस करने में मदद करेंगे कि द्वितीय विश्वयुद्ध में सोवियत जनता

और उसकी सेना की विजय कोई आकस्मिक संयोग नहीं, वल्कि वह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और साथ ही शुद्ध सैनिक हेतुओं द्वारा निर्धारित एक तर्क-संगत और अपरिहार्य परिणति थी।

सोवियत जनता युद्ध के दौरान ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका और अन्य देशों के जनगण द्वारा किये गये प्रयासों और वलिदानों की सदैव पूरी तरह सराहना करती आयी है। वह इस वात को नहीं भूलती कि जव नाज़ी जर्मनी ने सोवियत संघ पर हमला किया, तो उससे पहले आक्रमणकारियों से पोल, फ्रेंच, ब्रिटिश, वेल्जियन, सर्व, क्रोशियन, ग्रीक, अल्वानियन, चेक, स्लोवाक, चीनी, वियतनामी, कोरियाई और अन्य जनगण ने ही लोहा लिया था। और अगर आक्रमणकारियों को रोका नहीं जा सका था, तो इसके लिए वे दोषी नहीं थे।

आक्रांताओं को दंडित करने क लिए आवयश्क था कि अनेक राष्ट्र मिल-जुल कर प्रयास करते। यह सव न हो पाने के कारण ही संघर्ष का मुख्य जिम्मा सोवियत जनता के कंधों पर आ पड़ा था।

जर्मनी फासिस्ट गुट की मुख्य शक्ति था और 1941 में सोवियत संघ पर हमला करने से पहले उसने कभी पराजय का स्वाद नहीं चखा था। उसके पास पूंजीवादी जनता का सवसे वलशाली सैन्यतंत्र था जो अनेक यूरोपीय देशों को वेतहाशा रौंदता चला गया था। जव सोवियत सघ पर हमला किया गया, तो आरंभ से ही सोवियत-जर्मन मोर्चा फासिज़्म के विरुद्ध युद्ध में मुख्य और निर्णायक मोर्चा वन गया। इस कथन के क्या आधार हैं?

जून 1941 से 1944 के मध्य तक, जव दूसरा मोर्चा खोला गया था, सोवियत जर्मन मोर्चे पर एक साथ युद्धरत शत्रु डिवीज़नों की संख्या 190 से 270 के वीच वनी रही। इसकी तुलना ज़रा उत्तरी अफ्रीका में अमरीकी और ब्रिटिश सेनाओं के विरुद्ध युद्धरत दुश्मन के 9 से 20 तक डिवीज़नों से तथा इटली के 7 से 26 तक डिवीज़नों से कीजिए। 1941-42 के उन-उन दौरों में जव संग्राम अपने चरमोत्कर्ष पर था, नाज़ियों ने अपनी 70 प्रतिशत से अधिक स्थल सेना और अधिकांश वायु-सेना सोवियत सेना के खिलाफ ही भिड़ा रखी थी। स्तालिननग्राद संग्राम के कुछ ही पहले दुश्मन ने अपने 237 में से 182 (अर्थात् 76.7 प्रतिशत) डिवीज़न पूर्वी मोर्चे पर तैनात कर दिये थे। 1944 की गर्मियों में यूरोप में दूसरे मोर्चे के खुलने के वाद आंग्ल-अमरीकी सेनाओं का मुकावला करने को केवल 56-75 डिवीज़न तैनात थे, जवकि पूर्वी मोर्चे पर दुश्मन ने 195-240 डिवीज़न भिड़ा रखे थे जिनमें से 170 जर्मन डिवीज़न थे।

नाज़ी जर्मनी ने युद्ध के दौरान 1,36,00,000 जानें गंवायी थीं जिनमें से एक करोड़ अथवा 80 प्रतिशत पूर्वी मोर्चे पर मारे गये थे। साथ ही वहीं दुश्मन ने अपनी 75 प्रतिशत वायुसेना, 2,500 युद्धपोतों और परिवहन पोतों तथा अधिकांश

गनों और टैंकों को भी गंवाया। ये ही नाज़ी जर्मनी के पतन को अपरिहार्य बना देने वाले कारक थे।

जिस समय युद्ध जारी था और सोवियत जनता भारी मुसीबतें झेलते हुए नाज़ी आक्रमणकारियों के मुख्य सैन्यबल को चकनाचूर कर रही थी, पश्चिम में इस बात पर लेशमात्र भी संदेह नहीं किया जाता था कि युद्ध के नतीजे का फैसला सोवियत-जर्मन मोर्चे पर हो रहा है।

27 सितंबर 1944 को ब्रिटिश प्रधान मंत्री विंस्टन चर्चिल ने सोवियत संघ की मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष जोसेफ़ स्तालिन को लिखा था : "रूसी सेना को ही इस बात का श्रेय है कि उसने जर्मन सैन्यतंत्र के परखचे उड़ा डाले और इस समय अपने मोर्चे पर वह दुश्मन के अपेक्षाकृत कहीं ज्यादा बड़े हिस्से को थामे हुए है।"

सोवियत सेना की 25वीं जयंती के उपलक्ष्य में अपने अभिनंदन संदेश में अमरीका के राष्ट्रपति फ्रैंकलिन डी० रूज़वेल्ट ने लिखा था : "निश्चय ही लाल सेना और रूसी जनता ने हिटलरी सैन्यबल को अंतिम पराजय के रास्ते पर पहुंचाया है और अमरीका की जनता की शाश्वत प्रशस्ति अर्जित की है।"

दिसंबर 1944 में मास्को में बोलते हुए जेनरल चार्ल्स दे गाल ने कहा था : "फ्रांसीसी जानते हैं कि सोवियत रूस ने उनके लिए क्या किया है; वे जानते हैं कि उनकी मुक्ति में सोवियत रूस ने ही मुख्य भूमिका अदा की है।"

चीन में अमरीकी वायुसेना के कमांडर जेनरल क्लेयर एल० चेनॉल्ट ने अगस्त 1945 में स्वीकार किया था कि : "जापान के विरुद्ध युद्ध में सोवियत संघ का प्रवेश प्रशांत महासागर क्षेत्र में युद्ध को शीघ्र समाप्त करने में निर्णायक महत्त्व का था, और अगर परमाणु बमों का प्रयोग न किया गया होता, तो भी यही अंत हुआ होता। लाल सेना ने जापान पर जो त्वरित प्रहार किया, उसने उस घेराबंदी को पूरा कर दिया जिसने जापान को घुटने टेकने को मजबूर कर दिया।"

युद्ध से कुछ ही पहले और उसके आरंभिक चरणों में कुछ पश्चिमी राजनेता और पूंजीवादी समाचारपत्र सोवियत राज्य की शक्ति के बारे में संदेह व्यक्त करते रहे। अनेकों ने यह भविष्यवाणी की थी कि बलवान शत्रु के विरुद्ध बड़े युद्ध में सोवियत सत्ता का पतन हो जायेगा। किंतु साम्राज्यवाद के सबसे शक्तिशाली युद्धतंत्र के विरुद्ध संग्रामों में सोवियत राज्य और समाजव्यवस्था सारी अग्नि-परीक्षाओं में खरी उतरी और उसने अपनी जीवतता प्रमाणित कर दी।

नाज़ी हमले के खिलाफ संघर्ष ने एक बार फिर साबित कर दिया कि लेनिन के ये शब्द सही थे कि किसी भी युद्ध में विजय अंततः समरांगण में अपना रक्त बहाने वाली जनता को अनुप्राणित करने वाली भावना पर निर्भर होती है।

सोवियत जनता युद्ध के भयंकरतम दिनों में भी विचलित नहीं हुई और निर्मम शत्रु के सामने झुकी नहीं। मुक्ति युद्ध के उदात्त लक्ष्यों, स्वदेश के लिए प्रेम और आक्रांताओं के प्रति घृणा से उनमें सामूहिक शौर्य पैदा हो गया और

सोवियत सैनिकों, छापामार योद्धाओं और चंदावल के श्रमिकों के विचार और कर्म उनसे अनुप्राणित होते रहे।

दुश्मनों ने यह आशा की थी कि सोवियत संघ पर हमला करते ही उसकी विभिन्न जातियों के बीच संघर्ष भड़क पड़ेगा, उसकी एकता खंडित हो जायेगी और एक बहुराष्ट्रीय राज्य के रूप में उसका अस्तित्व टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा, किंतु सोवियत समाजवादी जनतंत्र संघ के छोटे-बड़े तमाम जनगण आम दुश्मन के खिलाफ कंधे से कंधा मिला कर लड़े, मोर्चे पर उन्होंने बड़े-बड़े पराक्रम दिखाये और चंदावल में श्रम का शौर्य दिखाया।

लियोनिद ब्रेझनेव ने लिखा था : "अगर मुझे महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के प्रधान चरितनायक का नामोल्लेख करना हो, तो मैं कहूंगा कि वह हमारे देश में बसे राष्ट्रों का पूरा का पूरा कुटुंब, भाईचारे के बंधनों में बंधा कुटुंब है।··· फासिज्म समाजवादी राष्ट्रों के बीच दरार डालने में कभी सफल न हुआ। उनकी बिरादराना एकता ने यह दिखा दिया कि वह सुदृढ़ और जीवंत है। वस्तुतः यह नाजी हमलावरों पर हमारी विजय को सुनिश्चित बनाने वाले मुख्य हेतुओं में एक था।"

सोवियत राज्य की शक्ति और सामर्थ्य को अनेक विदेशी राजनेता और विश्व के समाचारपत्र समझते थे। अपनी पुस्तक भारत की खोज में जवाहरलाल नेहरू ने लिखा कि द्वितीय विश्व युद्ध में सोवियत जनता ने जो पराक्रम दिखाया और जिस शक्ति और एकता का परिचय दिया, उसका श्रेय "···निःसंदेह उस सामाजिक और आर्थिक ढांचे को है जिसके फलस्वरूप एक व्यापक मोर्चे पर सामाजिक प्रगति हुई है, उत्पादन और उपभोग नियोजित रहा है, विज्ञान और उसके कार्यों का विकास हुआ है, तथा बहुत ही बड़े परिमाण में नेतृत्व की नयी प्रतिभा और क्षमता उभर कर सामने आयी है और साथ ही शानदार नेतृत्व सुलभ हुआ है।"

और अमरीकी पत्रकार एडगर स्नो ने अगस्त 1944 में इस प्रकार लिखा था :

"···युद्धरत मोर्चे के भीतर और उसके पीछे सोवियत सरकार और कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व और दिशा-निर्देशन कार्य कर रहा था।···अब अंधे लोग ही इस बात से इनकार कर सकते हैं कि लाल सेना की विजय सोवियत समाजवाद की और सबसे बढ़कर सोवियत नियोजन की विजय है।"

तुर्की के अखबार हबेर ने 1942 में लिखा : "नये शासनतंत्र ने सोवियत रूस में एक ऐसी नयी पौध तैयार की है जो जर्मनी के खिलाफ लड़ते हुए एक भी कदम पीछे हटने से बेहतर मर जाना समझती है।"

जनता और सेना का ऊंचा मनोबल दुश्मन पर अमोघ विजय का एक निर्णायक हेतु होता है। किंतु मशीनों और संसाधनों के आधुनिक युद्ध में विपुल

भौतिक और तकनीकी साधन तथा भारी उद्योग पर आधारित विकसित अर्थतंत्र भी अपेक्षित होता है।

सोवियत संघ में युद्ध से पहले के वर्षों में एक शक्तिशाली आर्थिक आधार का निर्माण कर लिया गया था। 1940 में औद्योगिक उत्पादन 1917 की क्रांति के पहले के रूस के औद्योगिक उत्पादन का लगभग आठ गुना था। मशीन-निर्माण और धातुकर्म उद्योग तो 1940 में क्रांति से पहले के रूस की अपेक्षा लगभग तीस गुना उत्पादन कर रहे थे। इसी कारण देश हथियारों, गोलाबारूद और उपकरणों का विराट पैमाने पर उत्पादन संगठित कर सका।

नाज़ियों ने सोवियत संघ पर जो विकराल युद्ध थोपा था, उसे दूर-दूर तक फैले विशाल भूभागों पर लड़ा गया था, उसमें दसियों लाख की सेनाओं ने भाग लिया था तथा बड़े परिमाण में सामरिक साज-सामानों का इस्तेमाल किया गया था। अतः सोवियत अर्थतंत्र पर भी उसने बहुत बड़े तकाजे थोप दिये थे। नाज़ी जर्मनी और उसके विजित देशों का कुल मिला-जुला औद्योगिक उत्पादन सोवियत संघ की अपेक्षा 50 से 100 प्रतिशत अधिक था तथा भारी उद्योग का उत्पादन 100 से 150 प्रतिशत अधिक। युद्ध के आरंभिक दौर में सोवियत संघ ने महत्त्वपूर्ण औद्योगिक और कृषिक्षेत्र तथा काफी बड़े परिमाण में भौतिक रेज़र्व और सामरिक उपकरण गंवा दिये थे। सोवियत संघ के पश्चिमी, मध्यवर्ती और दक्षिणी क्षेत्रों पर आक्रमणकारियों का कब्जा हो जाने से सोवियत अर्थतंत्र बहुत ही कठिन स्थिति में फंस गया था। विराट प्रयत्नों और महान बलिदानों के बाद ही सोवियत जनता मोर्चे को उसकी जरूरत की हर चीज की लगातार सप्लाई की व्यवस्था कर पायी थी।

यह भी तब संभव हुआ, जब नियोजित समाजवादी अर्थतंत्र की नेमतों, कर्मी दल की दक्षता और मज़दूरों और किसानों के शौर्यपूर्ण प्रयासों के सुफल प्राप्त हो लगे।

सोवियत संघ के पास आर्थिक सम्भावनाएं कुल मिलाकर अपेक्षाकृत काफी कम थीं और फिर भी उसने अस्त्र-निर्माण में जर्मनी को पछाड़ दिया। 1 जुलाई 1941 से 1 सितंबर 1945 के बीच सोवियत उद्योग ने 1,34,100 विमानों, 1,02,800 टैंकों और स्वचालित गनों, 8,25,200 फील्ड गनों और मोर्टारों, दसियों लाख राइफलों और बड़े परिमाण में अन्य उपकरणों का उत्पादन किया। यह जर्मनी के उत्पादन का लगभग दुगुना था।

क्वालिटी की दृष्टि से जापानी सेना के सामरिक उपकरणों की बात तो दूर रही, नाज़ी सेना को सुलभ सर्वोत्तम उपकरणों से भी सोवियत सामरिक उपकरण बेहतर थे। सोवियत जनता ने शीघ्र से शीघ्र विजय प्राप्त करने के लिए अपना समय और धन दोनों दिया। उसने युद्धकार्य के लिए स्वेच्छा से जो नकद

अंशदान किया, वह 110 अरब रूबल से भी अधिक पहुंच गया। चंदावल ने मोर्चे की तमाम अपार जरूरतों की पूर्ति की। उदाहरणार्थ, सोवियत सशस्त्र सेना ने युद्ध के दौरान एक करोड़ टन गोला-बारूद, 1.3 करोड़ टन ईंधन और 3.4 करोड़ टन खाद्य पदार्थों की खपत की। देश की कृषि ने युद्धकाल के दुष्कर दायित्वों का निर्वाह किया।

श्रम की असाधारण उपलब्धियां तो सोवियत मजदूरों, किसानों और बुद्धि-जीवियों की रोजमर्रे की घटनाएं बन गयी थीं। पूरे सोवियत संघ में नगरों और गांवों के 1.6 करोड़ से अधिक लोगों को "1941-45 के महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध के दौरान शौर्यपूर्ण श्रम के लिए" पदकों से पुरस्कृत किया गया था।

पश्चिम में अक्सर यह दावा किया जाता है कि अमरीका और ब्रिटेन से प्राप्त युद्ध संबंधी रसद और उपकरणों की सहायता के बगैर सोवियत संघ और उसकी सशस्त्र सेना नाज़ी आक्रमण के सामने टिक ही नहीं सकती थी।

यह सच है कि सोवियत संघ के पश्चिमी मित्रराष्ट्रों ने, जो सोवियत सेना के वीरतापूर्ण संघर्ष की बदौलत नाज़ी हमले के खतरे से मुक्त थे, सोवियत संघ को एक विशेष समझौते के तहत सामरिक उपकरणों, परिवहन साधनों और अन्य युद्ध सामग्रियों की आपूर्ति की थी। सोवियत जनता उसे सदा कृतज्ञता के साथ याद रखेगी। किंतु कुल मिलाकर ये आपूर्तियां उससे बहुत ही कम थीं जिसका स्वयं सोवियत संघ ने उत्पादन किया था। मित्रराष्ट्रों ने सोवियत संघ द्वारा युद्ध में प्रयोग में लाये गये उपकरणों में से 5 प्रतिशत से भी कम फील्डगनों, लगभग 10 प्रतिशत टैंकों, 0.6 प्रतिशत गोलों, 1.7 प्रतिशत सबमशीनगनों और लगभग 12 प्रतिशत विमानों की आपूर्ति की थी।

वास्तविकता यह है कि सोवियत सेना ने नाज़ी दैत्य का मेरुदंड स्वयं अपने हथियारों से तोड़ा था, न कि विदेशी।

द्वितीय विश्वयुद्ध में सोवियत सेना ने दुनिया को यह दिखा दिया कि वह एक ऐसा सैन्य संगठन है, जिसके पास उत्तम सैनिक और अधिकारी और प्रतिभा-सम्पन्न जेनरल, अद्यतन हथियार और उन्नत सैन्यविज्ञान हैं। युद्ध के आरंभिक चरणों में उसे गंभीर कठिनाइयों का अनुभव करना पड़ा। उसके पास रणक्षेत्र में अपेक्षाकृत कम डिवीज़न थे, अपेक्षाकृत कम उपकरण थे और कम सामरिक अनुभव था, किंतु हर संग्राम में उसकी शक्ति और सामर्थ्य उत्तरोत्तर बढ़ते गये।

युद्ध के उन दौरों में भी जब दुश्मन संख्या की दृष्टि से सोवियत सेना से कहीं बढ़कर था, उसे गंभीर पराभव झेलने पड़े, जैसा कि मास्को और स्तालिनग्राद में हुआ।

1943 की गर्मियों तक, जब सोवियत सशस्त्र सेना जनबल (जो लगभग दस लाख अधिक था) और युद्ध सामग्रियों, दोनों की दृष्टि से दुश्मन से अधिक समर्थ

हो चुकी थी, स्थिति आमूल बदल गयी थी। सोवियत सर्वोच्च कमान अब दुश्मन से अपनी मर्जी मनवाने में सक्षम हो चुकी थी। इसका ज्वलंत प्रमाण कुर्स्क शिलाकोटि के उस संग्राम में मिला, जिसने सोवियत संघ के पक्ष में युद्ध के परिणाम को तत्वतः सुनिश्चित ही कर दिया था। 1944 और 1945 के संग्रामों में सोवियत सेना ने ऐसी सामरिक शक्ति का परिचय दिया कि दुश्मन ने सोवियत सैन्यबल को आगे बढ़ने से रोकना बंद कर दिया।

सेना के सभी अंगों और सेवाओं का शौर्य, अपनी समाजवादी मातृभूमि, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के प्रति उनकी भक्ति उन निर्णायक हेतुओं में एक थी जिनके कारण नाज़ी जर्मनी पर विजय संभव हुई। यह व्यक्तियों या व्यक्ति-समूहों का शौर्य नहीं था, जैसा कि किसी भी सेना में होता है। यह पूरी की पूरी इकाइयों, सेनाओं, मोर्चों और बेड़ों द्वारा प्रदर्शित किया गया पराक्रम संबंधी आत्मत्याग और शौर्य था। यही कारण है कि सत्तर लाख से अधिक नर-नारियों ने आर्डरऔर पदक प्राप्त किये। साथ ही सोवियत संघ के हीरो की उपाधि भिन्न-भिन्न कौमियतों के 11,000 से अधिक सैनिकों को प्रदान की गयी थी।

कम्युनिस्टों ने सैनिकों को नेतृत्व प्रदान कर तथा उन्हें विजय में विश्वास से अनुप्राणित कर योद्धाओं की पांतों को पुख्ता किया। मार्शल जुकोव ने अपने संस्मरणों में लिखा : "सच बात तो यह है कि अगर हमारे पास अनुभव और प्राधिकार से संपन्न कम्युनिस्ट पार्टी न रही होती, तो हम दुश्मन को परास्त न कर पाये होते...।" सोवियत संघ के हीरो की उपाधि से अलंकृत तीन-चौथाई लोग कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे। तीस लाख कम्युनिस्टों ने अपने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की आहुति दी। इसके बावजूद पार्टी की कुल सदस्यता घटने के बजाये काफी बढ़ गयी। 1945 में उसकी सदस्य संख्या 59,00,000 अर्थात् युद्ध के शुरू होने के समय से 20 लाख अधिक थी। मोर्चे पर सोवियत जनता की युवा पीढ़ी ने पराक्रम दिखाया। कमांडरों ने देखा कि ऐसे कर्तव्यों को अंजाम देने के लिए, जिनके लिए असामान्य शौर्य और साहस अपेक्षित हो, वे तरुण कम्युनिस्टों पर सदा भरोसा कर सकते हैं। युद्ध के दौरान तरुण कम्युनिस्ट लीग में 1.2 करोड़ नौजवान भर्ती हुए। उनमें पचास लाख लड़ाकू सैनिक बने।

कयुनिस्ट पार्टी ने बड़ी संख्या में सैनिक कमांडरों को शिक्षित किया था तथा पदोन्नति देकर प्रमुख पदों पर नियुक्त किया था। उनके नाम सोवियत संघ में ही नहीं, बल्कि अन्य देशों में भी ख्यात हैं, जैसे : ज्यार्जी जुकोव, अलेक्सांदर वसीलेव्स्की, इवान बाग्राम्यान, निकोलाइ वातुतिन, लियोनिद गोवोरोव, आर्सेनी गोलोव्को, आंद्रेइ येर्योमेंको, इवान कोनेव, निकोलाइ कुज्नेत्सोव, रोदिओन मालिनोव्स्की, किरिल मोस्कालेंको, फ़िलिप ओक्त्याब्रस्की, इवान पेत्रोव, कोंस्तांतिन रोकोसोव्स्की, फ्योदोर तोल्बुखिन, इवान चेर्न्याखोव्स्की, वासिली चुइकोव

और अन्य अनेक। जोसेफ स्तालिन सोवियत संघ की सशस्त्र सेना के सर्वोच्च सेनाधिपति थे।

सोवियत सैन्यविज्ञान और उसके घटक—युद्ध कला—ने रणक्षेत्र में यह सिद्ध कर दिया कि वह नाज़ी जर्मनी के रणनीतिज्ञों के सैन्य सिद्धांतों से श्रेष्ठ था। नाज़ी जेनरल और अन्य सैनिक नेता सोवियत कमांडरों की निपुणता को स्वीकार करने को वाध्य हुए। जेनरल हेंज़ गुडेरियन ने लिखा था : "रूसी सैनिक सदा अपनी दृढ़ता और अडिग चरित्र के लिए उल्लेखनीय होता था।…द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान यह भी स्पष्ट हो गया कि सोवियत सर्वोच्च कमान के पास रणनीति के क्षेत्र में उच्च स्तर की योग्यता थी।"

नुरेम्वर्ग मुकदमे में गोएरिंग के सफाई पक्ष के वकील ने मर्मभेदी स्वर में कहा कि जैसा मैंने सुना है, फील्ड मार्शल पाउलुस ने युद्धवंदी के रूप में शीर्षस्थ सोवियत सैनिक अकादेमी में रणनीति पर व्याख्यान दिया था। इस पर पाउलुस ने उत्तर दिया :

"सोवियत रणनीति हमारी रणनीति से इतनी श्रेष्ठ सिद्ध हुई कि मुझे इस वात में संदेह है कि रूसियों को गैरकमीशन-प्राप्त अधिकारियों के स्कूल में भी मेरे व्याख्यान की जरूरत महसूस हो। इसका सबसे अच्छा प्रमाण है वोल्गा के संग्राम का नतीजा, जिसके फलस्वरूप मैं वंदी वना लिया गया। साथ ही इसका प्रमाण यह वात भी है कि ये सारे महानुभाव यहां कठघरे में खड़े हैं।"

हथियारों से मुक्त, युद्धों से मुक्त संसार के लिए

"अगर मानवजाति अपने भविष्य को दांव पर नहीं लगाना चाहती है, तो वह हथियारों की होड़ और युद्धों को अनंत काल तक बर्दाश्त नहीं करती रह सकती। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी इस बात के खिलाफ़ है कि विचारों के संग्राम को राज्यों और जनगण के बीच मुठभेड़ में बदला जाये, वह शास्त्रास्त्रों और उनका प्रयोग करने की तत्परता के खिलाफ़ है क्योंकि इससे वे समाज व्यवस्थाओं की क्षमताओं को मापने के पैमाने बन जा सकते हैं।"

—यूरी आंद्रोपोव

नाज़ी सैन्यवल ने सोवियत अर्थतंत्र को जो क्षति पहुंचायी थी, वह अपरिमेय थी। हिटलरपंथियों ने 1,710 नगरों, कस्बों और बस्तियों को, 71,000 से अधिक गांवों को, 32,000 से अधिक औद्योगिक उद्यमों को, 65,000 किलोमीटर रेलमार्गों और 4,000 से अधिक रेलवे स्टेशनों को पूर्णतः या अंशतः नष्ट कर डाला था। हमलावरों ने 98,000 सामूहिक फार्मों, 1,876 राजकीय फार्मों और 2,890 मशीन और ट्रैक्टर स्टेशनों को लूटा और तहस-नहस कर डाला था। नाज़ी जर्मनी और उसके मित्रों ने अधिकृत सोवियत भूक्षेत्र को जो भौतिक क्षति पहुंचायी थी, वह (युद्ध के पहले के मूल्यों में) 2,6000 अरब रूबल की थी, जिसमें लूटे और तहस-नहस किये गये पदार्थीय मूल्यों की कीमत 679 अरब रूबल थी। इतिहास में कभी किसी देश ने किसी युद्ध में इतनी क्षति और विनाश नहीं झेला है।

युद्ध के दौरान हमारे देश ने अपने दो करोड़ से अधिक नागरिकों को गंवा दिया। इसलिए सोवियत जनता अच्छी तरह जानती है कि युद्ध क्या होता है, और वह किसी नये युद्ध को छिड़ने से रोकने के लिए कृतसंकल्प है। युद्ध

सोवियत संघ ऐसे लोगों के दृष्टिकोण को सरासर अस्वीकार करता है, जो जनसामान्य को यह विश्वास दिलाने की कोशिश करते हैं कि हर चीज का फैसला सदा शक्ति और हथियार करते हैं और करते रहेंगे। आज जनगण जिस तरह निर्णायक बनकर आगे आ गये हैं, वैसा पहले कभी नहीं हुआ था। उनकी आवाज को कोई बंद नहीं कर सकता। वे अपनी पुरज़ोर और सोद्देश्य कार्रवाइयों के जरिए नाभिकीय युद्ध का खतरा दूर करने तथा शांति की और उसके द्वारा हमारी पृथ्वी पर जीवन की रक्षा करने में सक्षम हैं।

इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि स्वातंत्र्यप्रिय राष्ट्रों की शक्ति उनकी एकजुटता और कार्यगत एकता में, जंगबाजों के अतिक्रमणों के प्रति उनकी परम सतर्कता में निहित है। आक्रमणकारी को मात्र शांतिपूर्ण अपीलों या रिआयतों से शांत नहीं किया जा सकता; अपनी आर्थिक और प्रतिरक्षात्मक क्षमता से संबलित देशों और राष्ट्रों की समन्वित और निर्णायक कार्रवाइयों द्वारा ही उन पर अंकुश लगाया जा सकता है। इस दृष्टि से सोवियत संघ और अन्य समाजवादी देशों की प्रतिरक्षा शक्ति शांति की वास्तविक गारंटी और अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा का दुर्ग है।

ऐतिहासिक अनुभव से यह सिद्ध होता है कि समाजवादी और पूंजीवादी देशों के बीच शांतिपूर्ण सहजीवन और परस्पर लाभकारी सहयोग सर्वथा संभव है। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान नाज़ी खतरे से लड़ने के लिए अलग-अलग समाज व्यवस्थाओं वाले राष्ट्रों और राज्यों का एक शक्तिशाली संश्रय गठित हो गया था। ऐसी स्थिति में आज उनके बीच समझौता असंभव क्यों होना चाहिए?

यह संभव ही नहीं; आवश्यक भी है, अत्यंत आवश्यक!

सोवियत जनता ने युद्ध में बेहद कष्ट झेला था। अतः वह शांति को प्राणों से प्रिय मानती है और शांति का दृढ़ समर्थन करती है। वह भविष्य की ओर विश्वास के साथ देखती है: उसका विश्वास है कि नया विश्वयुद्ध अपरिहार्य नहीं है और विश्व के राष्ट्रों के संयुक्त प्रयत्न से उसका निवारण किया जा सकता है और किया जाना चाहिए। यह एक कठिन किंतु उदात्त कर्तव्य है—धरती पर जीवन को बचाये रखने का कर्तव्य।

□□